अध्याय 1

सृष्टि

उत्पत्ति का आरम्भ सृष्टि के भव्य, विशाल दृश्य से होता है जो पूरी कायनात में फैला है। जब प्रभु सृष्टिकर्ता ने कहा तब तेजोमय प्रकाश की चमक ने घोर अंधकार को चीरा और उसे उजियाले से अलग किया। लेखक, किसी चित्रकार के समान चित्र को कागज़ पर उतारते हुए, कायनात को पृष्ठभूमि पर दिखता है। एक अलगाव हुआ, पृथ्वी के जल को आकाश के जल से अलग किया गया। इसके बाद सूखी भूमि बनी जिसमें बहुतायत से वनस्पति उत्पन्न हुई। आकाश में, सूर्य, चंद्रमा और तारे अपने स्थान पर स्थिर किए गए ताकि दिन को रात से अलग किया जा सके और ऋतुओं तथा वर्ष को नियंत्रित किया जा सके।

इस नायाब रचना से पहले, लेखक का सृष्टि की छोटी से छोटी बातों पर बारीकी से विचार करता है। उसने जल को हर प्रकार के समुद्री जीव-जन्तुओं से और आकाश को उड़ते पक्षियों से भरा। जब लेखक/चित्रकार अपना ध्यान सूखी भूमि पर केंद्रित करता है, तो वह परमेश्वर को रिक्त स्थानों में हर प्रकार के जीव-जन्तुओं से, जिनमें जंगली पशु, घरेलू पशु और मवेशी तथा पृथ्वी पर रेंगनेवाले जन्तु शामिल थे, उनसे भरता हुआ दिखाता है। अंत में सृष्टि के आकर्षण के केंद्र के रूप में वह परमेश्वर को अपने स्वरूप एक जीव को बनाते हुए दिखाता है: एक मनुष्य जिसे उसने अपने स्वरूप में बनाया, जिसके साथ वह सृष्टिकर्ता अपना व्यक्तिगत सम्बन्ध रख सके। उसे अन्य सभी जीव-जन्तुओं से अलग, परमेश्वर ने मनुष्य को अपनी अद्‌भुत सृष्टि की देखभाल करने और उस पर अधिकार रखने का महान सौभाग्य और ज़िम्मेवारी दी।

उत्पत्ति के पहले अध्याय में सृष्टि का यह दृश्य आश्चर्यचकित करनेवाला और अद्‌भुत है। यह पाठक को प्रेरित करता है कि वह कायनात के परमेश्वर को उसकी प्रतिभाशाली रचना, बुद्धि और सामर्थ्य के लिए आदर दे। संसार को अस्तित्व में लाने के लिए परमेश्वर का केवल कहना ही पर्याप्त था। जब कोई इस बात पर विचार करता है कि परमेश्वर, जिसने निर्बल और कमजोर मानव-जाति के रहने के लिए इतने सुंदर संसार को रचा, कितना महान है, और यह कि मनुष्य पाप से भरा होने और अनेक बार विद्रोह करने के बावजूद फिर भी वह उसको आशीष देता और उसके लिए प्रबंध करता है, तो उसके लिए उसके मन में प्रशंसा उत्पन्न होती है और उसे आत्म-दीनता का अनुभव होता है। इस प्रकार का भय और आदर का भाव आठवें भजन में दिखाई देता है:

जब मैं आकाश को, जो तेरे हाथों का कार्य है,
और चंद्रमा और तारागण को जो तू ने नियुक्त किए हैं, देखता हूँ;
तो फिर मनुष्य क्या है कि तू उसका स्मरण रखे,
और आदमी क्या है कि तू उसकी सुधि ले?
क्योंकि तू ने उसको परमेश्वर से थोड़ा ही कम बनाया है,
और महिमा और प्रताप का मुकुट उसके सिर पर रखा है।
तू ने उसे अपने हाथों के कार्यों पर प्रभुता दी है;
तू ने उसके पाँव तले सब कुछ कर दिया है:
सब भेड़-बकरी और गाय-बैल
और जितने वनपशु हैं,
आकाश के पक्षी और समुद्र की मछलियाँ,
और जितने जीव-जन्तु समुद्रों में चलते फिरते हैं।
हे यहोवा, हे हमारे प्रभु,
तेरा नाम सारी पृथ्वी पर क्या ही प्रतापमय है (भजन 8:3-9)।

भजनकार मानवजाति को यह समझाना चाहता है कि कायनात की रचना अनियमित या अकस्मात प्रक्रिया नहीं है परंतु एक ईश्वरीय रचना है। उत्पत्ति में सृष्टि का विवरण क्रमानुसार है और इसमें शब्दों का बार-बार इस्तेमाल किया गया है। यद्यपि लेखक कविता नहीं लिख रहा था परंतु छ: दिन की सृष्टि का वर्णन करने के लिए उसने साधारण इब्रानी साहित्यिक विधि और शब्दों के दोहराए जाने का प्रयोग किया:

जब प्रत्येक दिन परिचय से आरम्भ होता है: "फिर परमेश्वर ने कहा" (1:3, 6, 9, 14, 20, 24; देखें 1:11, 26, 29)।

उसके बाद, एक ईश्वरीय आज्ञा दी गई: "ऐसा हो जाए"; "ऐसा इकट्ठा हो जाए"; "ऐसा उत्पन्न हो जाए" (1:3, 6, 9, 11, 14, 20, 24, 26)।

तब एक सूचना दी गई है: "वैसा ही हो गया" (1:7, 9, 11, 15, 24, 30)।

रची गई चीज़ों का मूल्यांकन किया गया है, जैसे "परमेश्वर ने देखा कि अच्छा है" (1:4, 10, 12, 18, 21, 25, 31)।

अंत में, समय का क्रम दिया गया है, "साँझ" और "सवेरा" (1:5, 8, 13, 19, 23, 31)।

जब परमेश्वर ने अपनी सृष्टि को "अच्छा" कहा और अंत में "बहुत अच्छा" कहा तब उसने इब्रानी शब्द טוֹב *(तोव)* का प्रयोग नहीं किया जो "बुरा" का विपरीत अर्थात नैतिक भाव में "अच्छा" है। इसके विपरीत, यह व्यक्त किया गया कि प्रभु अपनी रचना को पूर्ण रीति से स्वीकृत करता है क्योंकि वह वैसी थी जैसे उसे होना चाहिए, बिना किसी कलंक या किसी ऐसे दोष के जिसे सही करने की जरूरत हो। वह ऐसी है मानो परमेश्वर अर्थात उच्च शिल्पकार, रुककर अपने हाथ की बनाई सुंदर रचना की प्रशंसा करता है।

सृष्टि के विवरण की एक और काव्यात्मक विशेषता उसकी (समानांतर) संरचना: आकाश और पृथ्वी की सृष्टि, जिसमें सभी निर्जीव वस्तुएं और सभी

जीव-जन्तु हैं जिन्हें छ: दिनों में रचा गया। पहले दिन, अंधकार और उजियाले को अलग किया गया; और चौथे दिन में सूर्य, चंद्रमा और तारे आकाश में स्थिर किए गए जिससे व्यवस्थित रूप से दिन और रात अलग हुए। दूसरे दिन, नीचे के जल और ऊपर के जल को अलग किया और पाँचवें दिन आकाश पक्षियों से भर गया और पृथ्वी का जल, सब जल-प्राणियों से भर गया। तीसरे दिन सूखी भूमि को जल ("समुद्र") से अलग किया गया और पेड़-पौधे हुए, जबकि छठे दिन परमेश्वर ने पृथ्वी को मानव-जाति के साथ हर प्रकार के जीव-जन्तुओं से भर दिया। प्रारम्भ की अपूर्णता को पूर्ण किया गया; निराकार को एक रूप दिया गया। लेखक यह बताकर समाप्त करता है कि परमेश्वर ने सातवें दिन "विश्राम" किया (2:2, 3)।

सृष्टि की समानांतर संरचना

अपूर्ण और "बेडौल" (1:2) - खाली और अंधकार

कार्य स्थिति	*भरे गए*
दिन 1: अंधकार से उजियाला (उजियाला रचा गया और अंधकार से अलग किया गया; 1:3-5)	दिन 4: सूर्य, चंद्रमा और तारे (रात और दिन को संचालित करने के लिए; 1:14-19)
दिन 2: जल से आकाश (आकाश के जल को नीचे के जल से अलग किया गया; 1:6-8)	दिन 5: पक्षी और मछलियाँ (आकाश और जल में रहने के लिए; 1:20-23)
दिन 3: सूखी भूमि और समुद्र (पृथ्वी का पेड़-पोधे उपजाना; 1:9-13)	दिन 6: मानव-जाति और जीव-जन्तु (पृथ्वी पर रहने और साग-पात खाने के लिए; 1:24-31)

दिन 7: परिपूर्णता और "बहुत अच्छा" - परमेश्वर ने विश्राम किया (2:1-3)

सृष्टि का विवरण कायनात की ईश्वरीय संरचना और व्यवस्था को प्रकट करता है; यह किसी अंतरिक्षीय घटना या प्रकृति के नियमों का परिणाम नहीं है। बल्कि, यह प्रेमी और एकमात्र परमेश्वर की इच्छा का परिणाम है जिसके बोलने से न केवल यह अस्तित्व में आया परंतु जो अपने सभी प्राणियों, विशेषकर मनुष्य के निर्वाह के लिए इसे बनाए रखता है (देखें भजन 104)।

बाइबल परमेश्वर के अस्तित्व के विषय पर किसी दार्शनिक तर्क से आरम्भ नहीं होती है; बल्कि वह मानती है कि न केवल परमेश्वर का अस्तित्व है बल्कि यह भी कि वह सबका सृष्टिकर्ता है। परमेश्वर का संदेश हमें पवित्रशास्त्र में दिया गया है जो उसकी रचनात्मक क्रिया से आरम्भ होता है।

"परमेश्वर ने आकाश और पृथ्वी की सृष्टि की ..." (1:1, 2)

[1]आदि में परमेश्वर ने आकाश और पृथ्वी की सृष्टि की। [2]पृथ्वी बेडौल और सुनसान पड़ी थी; और गहरे जल के ऊपर अन्धियारा था: तथा परमेश्वर का आत्मा जल के ऊपर मण्डराता था।

आयत 1. सृष्टि का विवरण בְּרֵאשִׁית *(बेरेशीथ)* से आरम्भ होता है जो **आदि में** परमेश्वर की रचनात्मक क्रिया से सम्बंधित है। परम्परागत अनुवाद, जो कि हमें बाइबल के प्राचीन अनुवादों में मिलते हैं, वे आयत 1 को एक अलग वाक्य मानते हैं। यह कथन मेसोरेटस (यहूदी शास्त्री) से सहमत है जिन्होंने इब्रानी लिपी में स्वर बिंदुओं और उच्चारण चिह्नों को 800 ई. में जोड़ा था। NASB के समान, कई अंग्रेजी अनुवादों ने आयत 1 को एक अलग वाक्य में अनुवाद किया है (KJV; ASV; RSV; JB; NIV; NKJV; REB; NCV; CEV; NLT; ESV), और इसी सोच का पालन इस टीका में किया गया है।[1] आयत 1, एक शीर्षक के समान है जो शेष अध्याय (1:2-31) के सार के रूप में है। यह हमें वंशावलियों की ओर ले जाता है 5:1; 6:9; 10:1; 11:10. प्रत्येक वंशावली एक मुक्त वाक्यांश से आरम्भ होती है जो लिखी घटनाओं के परिचय के रूप में कार्य करती है।[2]

परमेश्वर के लिए אֱלֹהִים *(इलोहिम)* शब्द प्रयोग किया गया है, परंतु वास्तविक रूप में यह व्यक्तिगत नाम जैसे "याहवेह" या "एल शदाई" नहीं है। इस अध्याय में, यह इसलिए उपयुक्त है क्योंकि यहाँ कर्ता इस्राएल की वाचा का व्यक्तिगत परमेश्वर नहीं बल्कि परमेश्वर (*इलोहिम*) है, जो पूरी कायनात का एकमात्र सृष्टिकर्ता है।

वाक्य हमें आगे बताता है कि परमेश्वर ने **आकाश और पृथ्वी की सृष्टि की**, जो दूसरे प्रकार से यह कहना कि उसने पूरी कायनात को बनाया। इब्रानी शब्द בָּרָא *(बारा)* एक ऐसी क्रिया है जो पुराने नियम में केवल परमेश्वर को कर्ता के रूप में लेती है; यह मनुष्य के नहीं परंतु हमेशा परमेश्वर के रचनात्मक कार्य को दर्शाती है।[3] यह हमेशा किसी नए के अस्तित्व में आने को सूचित करती है, चाहें पहले से उपस्थित सामग्री से (जैसे यशा. 43:15, 16; 65:18; यिर्म. 31:22) या जहां पहले से उपस्थित सामग्री नहीं हो (जैसे भजन 89:12; यशा. 45:12)। उत्पत्ति 1 के मामले में निःसंदेह बाद का विषय है। हालांकि यह आयत विशेष रूप से यह नहीं बताती है कि परमेश्वर ने ब्रह्मांड को "कुछ नहीं" से रचा परंतु इसका यही अर्थ है, क्योंकि उसने ऐसा केवल वचन को ही बोलकर आराम से कर दिया। यह विचार इब्रानियों में बहुत स्पष्ट है जहां पर लिखा है, "विश्वास ही से हम जान जाते हैं कि सारी सृष्टि की रचना परमेश्वर के वचन के द्वारा हुई है। पर यह नहीं कि जो कुछ देखने में आता है, वह देखी हुई वस्तुओं से बना हो" (इब्रा. 11:3)।

आयत 2. पहली आयत में, आकाश और पृथ्वी की सृष्टि के विषय में परिचय

देने के बाद, लेखक **पृथ्वी की ओर** मुड़ता है और उसे **बेडौल और सुनसान** बताता है תֹהוּ וָבֹהוּ *(थोहू वाबोहू)*। दूसरे शब्दों में, वह अव्यवस्थित दशा में थी। पृथ्वी पर इस प्रकार का जीवन रहित अव्यवस्थित अवस्था उस स्थिति के विपरीत है, जो सृष्टि निर्माण के छठे दिन में थी जहाँ सुंदरता और जीवन को दर्शाया गया है। दो इब्रानी शब्द תֹהוּ *(थोहू)* और בֹהוּ *(बोहू)* को पुराने नियम में दो और स्थानों पर एक साथ प्रयोग किया गया है। दोनों स्थानों में, इसे दुष्ट देशों पर ईश्वरीय दण्ड को बताने के लिए इस्तेमाल किया है। पहला अनुच्छेद बताता है कि प्रभु की तलवार "न्याय करने के लिए एदोम पर, और जिन पर मेरा शाप है उन पर पड़ेगी" (यशा. 34:5), और तब यशायाह इस ईश्वरीय दण्ड के परिणाम का वर्णन करता है जैसे "उजाड़" (*थोहू*) और "सुनसान" (*बोहू*) (यशा. 34:11)।

दूसरा अनुच्छेद हमें यिर्मयाह में मिलता है। यरूशलेम और यहूदा के पापों और मूर्तिपूजा के लिए भविष्यवक्ता विनाश का संदेश दे रहा था। जब बेबीलोन की सेना बचे हुए यहूदियों के देश और उनकी राजधानी को विनाश कर रही थी, तब उसने ऐसा दर्शन देखा जो सृष्टि के विपरीत था। सशक्त काव्यात्मक रूप में, वह पृथ्वी की पिछली अवस्था जैसे वह सृष्टि से पहले थी, वर्णन करता है। सभी शहर नष्ट कर दिए गए, और वहाँ पर कोई आदमी, पक्षी, पेड़-पौधे या प्रकाश नहीं रहा। पृथ्वी फिर से एक बार "बेडौल" (*थोहू*) और "सुनसान" (*बोहू*) हो गई (यिर्म. 4:23)। इन विनाश की भविष्यवाणियों में, इन दो शब्दों के मिलने से एक अर्थ निकलता है, जो उत्पत्ति 1:2-31 के अर्थ पर प्रकाश डालती है - अर्थात् जब तक अंधकार, अव्यवस्था और सूनेपन को सृष्टि की ज्योति, आकार, सुंदरता और अर्थ से बदला न जाए तब तक कुछ भी "अच्छा" नहीं कहा जा सकता।

गहरे जल के ऊपर अंधियारा था, "अंधकार" और "गहरा" दोनों शब्द ऐसे जुड़े हैं जैसे कुछ अनिष्ट हो, जिस प्रकार से पहले के लोग इन शक्तियों को मानते थे। बहुत समय तक यह समझा गया कि "गहरे" के लिए इब्रानी शब्द תְּהוֹם *(थेहोम)* अक्कादियन शब्द *तिआमात* से लिया गया है, जो प्राचीन बाबुल में "गहराई" की देवी थी। पौराणिक कहानी के अनुसार, इससे पहले कि अव्यवस्था से व्यवस्था उत्पन्न हो तिआमात को मादरुक (युवा देवता जो सभी देवताओं पर राज्य करना चाहता था) के द्वारा मारा जाना था।[4] हालांकि, हाल के समय में इस विचार के विपरीत ठोस तर्क प्रस्तुत किए गए हैं जिससे "अब यह माना जाता है कि भाषा के अनुसार तिआमात से *तेहोम* शब्द नहीं लिया गया है,"[5] और उत्पत्ति का लेखक अपनी शब्दावली के लिए इस बाबुल की पौराणिक कहानी पर निर्भर नहीं था। बाइबल में *थेहोम* का कहीं भी मानवीकरण नहीं है और न ही इसे ऐसी कोई शक्ति मानी गई है, जिसको परमेश्वर द्वारा ज्योति, जीवन और सुंदर जगत को रचने से पहले पराजित करना आवश्यक था। इसका वितरित सच है। शब्द है केवल गहरे, बेडौल पृथ्वी पर अंधियारे जल की ओर संकेत करता है। इनको अलग किया जाना था और सीमा में रखा जाना था जबकि परमेश्वर जल के प्रत्येक जीव-जन्तुओं को उन पक्षियों, जानवरों और मनुष्य से अलग करके अपने सृष्टि की प्रक्रिया को सुव्यवस्थित करे।

वाक्य यह भी बताता है कि **परमेश्वर का आत्मा जल के ऊपर मण्डराता था।** इब्रानी शब्द רוּחַ *(रुआक)* को जब *इलोहिम* (परमेश्वर) के साथ जोड़ा जाता है तो इसका अर्थ "हवा" या "आत्मा" हो सकता है। इसको "परमेश्वर की ओर से हवा" (NRSV) या "शक्तिशाली हवा" (NAB) करके भी प्रस्तुत किया गया है। परन्तु इस अर्थ की सम्भावना कम है क्योंकि पुराने नियम में जिन पन्द्रह आयतों में ये शब्द मिलता है उनमें से किसी का भी अर्थ "शक्तिशाली हवा" नहीं है।

यद्यपि उत्पत्ति 23:6 में *इलोहिम* को संज्ञा के रूप में नहीं बल्कि विशेषण के रूप में प्रयोग किया गया है जहां अब्राहम को "शक्तिशाली राजकुमार" (या "परमेश्वर का राजकुमार"; ASV), कहकर बुलाया गया, परंतु इस शब्द की इस प्रकार की समझ उत्पत्ति 1 के संदर्भ के साथ मेल नहीं खाती। मूल इब्रानी भाषा का अनुवादक 1:2 के *इलोहिम* में और उन *इलोहिम* में जो इस अध्याय में इक्कतीस बार के आए हैं, कैसे भेद कर सकता है, जिनका अर्थ केवल "परमेश्वर" ही है?

जहां *रुआक* का अर्थ "हवा" है, वह परमेश्वर की उपस्थिति का एक प्रभावशाली प्रकटीकरण है, और विनाशकारी शक्ति का सूचक है। उदाहरण के लिए, निर्गमन 15:10 परमेश्वर के लिए कहता है, "तू ने अपने श्वास का पवन चलाया, तब समद्र ने उनको [फिरौन की सेना] ढांप लिया; वे महाजलराशि में सीसे के समान डूब गए" (देखें यशा. 11:15; 40:7; होश 13:15)। उत्पत्ति 1 का संदर्भ इस प्रकार से *रुआक इलोहिम* के अर्थ का प्रयोग नहीं करता है। विनाशकारी शक्ति के रूप में होने के बजाय, *रुआक इलोहिम* एक रचनात्मक, निर्माण प्रक्रिया का भाग है जो उत्पत्ति में आरम्भ हुआ।

वाक्य बताता है कि परमेश्वर का आत्मा पृथ्वी के जल के ऊपर "मण्डराता" מְרַחֶפֶת *(मेरखपेथ)* था। इस अनुवाद का कारण यह है कि एक अन्य भाग में याहवेह को उकाब के समान प्रकट किया गया है, जो रक्षा के लिए अपने बच्चों के ऊपर "मण्डराता" (רָחַף) है (व्यव. 32:11)। यदि उत्पत्ति 1 में इस कथन का मतलब यह है, तो आयत इस बात पर ज़ोर देती है कि, यद्यपि वहाँ गहरे जल अव्यवस्थित स्थिति में था, फिर भी सब कुछ परमेश्वर के रक्षा करनेवाले आत्मा के नियंत्रण में था। केवल यह समय का भाव था जब परमेश्वर ने बोलना आरम्भ किया और व्यवस्था, जीवन तथा सुंदरता को अपनी सृष्टि के प्रथम स्तर पर आया।

दिन 1: उजियाले को बनायाऔर उसे अंधियारे से अलग किया (1:3-5)

3जब परमेश्वर ने कहा, "उजियाला हो," तो उजियाला हो गया। 4और परमेश्वर ने उजियाले को देखा कि अच्छा है; और परमेश्वर ने उजियाले को अन्धियारे से अलग किया। 5और परमेश्वर ने उजियाले को दिन और अन्धियारे को रात कहा। तथा साँझ हुई फिर भोर हुआ। इस प्रकार पहिला दिन हो गया।

आयत 3. जैसे सृष्टि की प्रक्रिया क्रमानुसार आरम्भ हुई, यह परमेश्वर के बोले गए शब्द के द्वारा हुआ। यह कथन **परमेश्वर ने कहा**, उच्चारण को और प्रतिरूप को स्थापित करता है जिसे लेखक बचे हुए पाठ के भाग में शुरू से लेकर अन्त तक पूरे धर्मशास्त्र में प्रयोग करता है। स्पष्ट करने के लिए, भजनकार कहता है, "आकाशमण्डल यहोवा के *वचन* से, और उसके सारे गण उसके मुँह की *श्वास* से बने ... क्योंकि उसने कहा और वह हो गया; उसने आज्ञा दी और उसका पालन हुआ" (भजन 33:6, 9; जोर दिया गया)। उस अनुच्छेद में "वचन" और "श्वास" (*रुआक़*, "आत्मा") के बीच में एक समानांतर है। जब परमेश्वर ने बोला, तब उसमें से उसकी आत्मा की रचनात्मक शक्ति निकली जिससे कि जो उसने कहा वह हो गया।

सृष्टिकर्ता का पहला अभिलेखित शब्द एक आदेश था: **"उजियाला हो"; और उजियाला हो गया।** कायनात में क्रम और सुंदरता लाने का प्रारम्भिक कार्य, उजियाले की रचना थी। यह एक प्राकृतिक या भौतिक उजियाला था जिसके बिना हर जगह अंधकार और अव्यवस्था होती। परमेश्वर ने उजियाले को सूर्य की रचना से तीन दिन पहले बनाया, यह तथ्य पाठक को विचलित नहीं करना चाहिए क्योंकि उत्पत्ति का लेखक इस बात की पुष्टि करता है कि परमेश्वर ने पहले दिन, प्रकाश को सूर्य के अलावा अन्य माध्यम से चमकने दिया। बाइबल में अंधियारे और उजियाले का प्रयोग कई बार पारस्परिक विशिष्ट क्षेत्रों को बताने के लिए किया गया है; उदाहरण के लिए, पूरे मिस्र देश पर तीन दिन तक अंधकार छाया रहा, मिस्रियों के घरों में भी; परंतु इस्राएलियों के घरों पर उजियाला था (निर्गमन 10:21-23)। जंगल में भी इस्राएलियों के तम्बुओं के आस-पास अंधियारा था, परमेश्वर के तम्बू पर आग का खम्भा था जो परमेश्वर के लोगों को प्रकाश देता था (गिनती 9:15-18; देखें निर्गमन 13:20-22)।

आत्मिक भाव में, जैसे अच्छाई बुराई का विपरीत है वैसे ही उजियाला अंधियारे से बिलकुल अलग है। कई बार उजियाले को अलंकार के रूप में प्रयोग किया गया है जैसे धार्मिकता और जीवन के क्षेत्र (भजन 37:6; 56:13), ज्ञान और परमेश्वर की आज्ञाओं (अय्यूब 12:22; 24:13) तथा उद्धार और परमेश्वर की उपस्थिति में प्रस्तुत किया गया है (गिनती 9:15, 16; भजन 27:1; यशा. 9:2)। दूसरी ओर, अंधियारा पाप और दुष्टता (अय्यूब 5:14; नीति. 2:13; सभो. 2:14), अंधविश्वास और मूर्तिपूजा (यशा. 9:2; यहेज. 8:12), तथा मृत्यु और न्याय को दर्शाता है (भजन 105:28; यहेज. 30:18; योएल 2:2)।

आयत 4. उजियाले की सृष्टि के बाद, **परमेश्वर** उत्कृष्ट चित्रकार के समान अपने कार्य की सराहना के लिए पीछे हटा और उसने **देखा** कि उजियाला बहुत सुंदर था। इसलिए उसने **उजियाले को अंधियारे से अलग किया** और उसे **अच्छा** कहा। "अच्छा" *(तोव)*, से परमेश्वर का यह मतलब नहीं था कि उजियाला नैतिक रूप से अच्छा था बल्कि वह सक्षम और उसके उद्देश्य को पूरा करने के लिए उपयुक्त था जैसे, ऊर्जा प्रदान करने के लिए जो वातावरण इस लायक बनाता है जिससे कि जीवन निर्वाह हो सके ताकि उसकी सृष्टि की सुंदरता दिख सके। जब

परमेश्वर ने "उजियाले को अंधियारे से अलग किया," तब उसने अंधियारे को नष्ट या पूरा रद्द नहीं किया जो पहले से वहाँ पर था। बल्कि, उसने उनको अलग किया ताकि वे अलग रहें। हर एक का अपने समय पर महत्व हो, एक कुछ समय के लिए रहे और दूसरा उसके बाद हो।

आयत 5. परमेश्वर ने उजियाले को दिन और अंधियारे को रात कहा। उत्पत्ति के पहले अध्याय में शुरू से लेकर अंत तक, लेखक इस बात पर ज़ोर देता है कि सृष्टिकर्ता अपनी बनाई हुई सब वस्तुओं को नाम देता है। उसने उजियाले को "दिन" और अंधियारे को "रात" नाम दिया (1:5)। परमेश्वर ने ऊपर के फैलाव को "आकाश" (1:8), सूखी भूमि को "धरती" और एकत्रित जल को "समुद्र" (1:10) कहा। इसके साथ में उसने पुरुष और स्त्री को "आदमी" (אָדָם, *आदम)*, या "मानवजाति" कहा (1:27; 5:1, 2 पर टिप्पणियां देखें)। पुराने नियम में किसी चीज़ को नाम देने का अर्थ था, उस पर प्रभुता दिखाना (देखें 2:20, 23; 3:20; 4:25; 2 राजा 23:34; 24:17)। इस प्रकार, परमेश्वर ने अपने द्वारा दिए गए नाम वाली सभी सृजी गई वस्तुओं को उनके कार्य सौंपे ताकि वे अपनी अपनी भूमिका निभा सकें।

तथा साँझ हुई फिर भोर हुआ। इस प्रकार पहिला दिन हो गया। सृष्टि के हर एक दिन के निष्कर्ष में लेखक अनुच्छेद का अंत इन्हीं शब्दों के द्वारा करता है और आनेवाले नए दिनों के लिए वह संख्या जोड़ता है (1:8, 13, 19, 23, 31)। इब्रानी सोच के अनुसार, अंधियारे से दिन का आरम्भ हुआ (देखें 1:2), जिसके बाद उजियाले की रचना हुई; और रात होने तथा दूसरा दिन निकलने तक यह प्रक्रिया चलती रही।

दिन 2: अंतर के द्वारा जल का विभाजन हुआ (1:6-8)

6फिर परमेश्वर ने कहा, "जल के बीच एक ऐसा अन्तर हो कि जल दो भाग हो जाए।" 7तब परमेश्वर ने एक अन्तर बनाकर उसके नीचे के जल और उसके ऊपर के जल को अलग अलग किया; और वैसा ही हो गया। 8और परमेश्वर ने उस अन्तर को आकाश कहा। तथा सांझ हुई फिर भोर हुआ। इस प्रकार दूसरा दिन हो गया।

आयतें 6-8. जैसे परमेश्वर ने फिर से कहा, जिसके परिणामस्वरूप **अंतर** उत्पन्न हुआ और उसके **नीचे के जल और उसके ऊपर के जल को अलग अलग किया; ... गया**। शब्द "अंतर" इब्रानी के (רָקִיעַ, *राकिया)* का अनुवाद है, इसका मूल अर्थ "फैला हुआ" या (धातु की थाली पर) "चोट मारा हुआ" से सम्बंध है। कुछ पद इस क्रिया से सम्बंधित (רָקַע, *राका)* का ठोस धातु पर चोट मारने के भाव में प्रयोग करते हैं (निर्गमन 39:3; गिनती 16:39 [17:4]; यशा. 40:19; यिर्म. 10:9; देखें अय्यूब 37:18)। यह कुछ विद्वानों को *राकिया* का अनुवाद "आकाश या 'गगन' जिसे इब्रानी लोग ठोस और 'जल' को ऊपर स्थिर रखने के

लिए मानते थे"[6] (देखें KJV)।

इससे स्पष्ट होता है कि उत्पत्ति का लेखक *राकिया* को एक छत के रूप में नहीं समझता है क्योंकि वह इस बात की पुष्टि करता है कि **परमेश्वर ने उस अन्तर को** स्वर्ग (שָׁמַיִם, *शमायिम)* या "आकाश" कहा (NIV)। वह आगे कहता है कि सूर्य, चन्द्रमा और तारे उस में स्थिर किए गए (1:14-17), और वह इसे "आकाश का खुला अंतर" कहता है जहां पक्षी उड़ते हैं (1:20) और यही वातावरण है। वह सच में उसे छत के रूप में नहीं मानता है जो कि किसी धातु या शीशे से बना हो। बल्कि, वह उस अंतर को अद्भुत घटना के तरीके से समझाता है। मनुष्य सूर्य और तारों को आकाश में स्थिर देखता है, परंतु उसी समय दूसरी ओर, पक्षी आसानी से आकाश में उड़ते हैं। इन आयतों में आकाश, ऊपर के पानी (बादलों में) और नीचे के पानी (पृथ्वी पर) के बीच में एक भाग है।

आकाश (या आसमान) के विषय में बाइबल का दृष्टिकोण, प्राचीन बेबीलोन के सृष्टि के विवरण से बिलकुल अलग है। *एनुमा एलीश* के अनुसार, मारदूक देवता ने जब समुद्र की देवी तिआमात को घात किया, "उसने उसको सीपदार मछली के समान दो भागों में चीर दिया।" उसका आधा भाग उसने पृथ्वी पर नीचे के जल में छोड़ दिया और आधा आकाश के (कैदखाने) में आसमान के रूप में ऊपर "चिन" दिया। फिर उसने पहरेदार लगाए और "उन्हें आज्ञा दी कि उसका पानी वहाँ से कहीं न जाए।"[8] इस पौराणिक कथा के अनुसार आसमान पहले से उपस्थित सामग्री अर्थात समुद्र की दुष्ट देवी तिआमात के आधे भाग से बना हुआ है। मारदूक ने उसे बंदी बनाकर रखा और पहरेदार रखे ताकि वह अपना हानिकारक जल पृथ्वी पर न बहा सके। इसलिए इस काल्पनिक कहानी में, आकाश के पानी को विरोधी देवी समझा गया है जिसे घात किए जाने के बाद भी हमेशा रोक लगानी पड़ती है ताकि पृथ्वी को उसकी बरबादी से बचा सकें। यह उत्पत्ति के लेखक से बहुत ही अलग दृष्टिकोण है या यीशु के, जिसने परमेश्वर को प्रेमी स्वर्गीय पिता कहा जो मानवजाति के जीवनों को "धर्मी और अधर्मी पर वर्षा करके" (मत्ती 5:45) आशीष देने के लिए आस लगाए रहता है।

दिन 3: पेड़, पौधे और भूमि, रची गई (1:9-13)

[9]फिर परमेश्वर ने कहा, "आकाश के नीचे का जल एक स्थान में इक्ठ्ठा हो जाए और सूखी भूमि दिखाई दे," और वैसा ही हो गया। [10]परमेश्वर ने सूखी भूमि को पृथ्वी कहा, तथा जो जल इकट्ठा हुआ उसको उसने समुद्र कहा: और परमेश्वर ने देखा कि अच्छा है। [11]फिर परमेश्वर ने कहा, "पृथ्वी से हरी घास, तथा बीजवाले छोटे छोटे पेड़, और फलदाई वृक्ष भी जिनके बीज उन्हीं में एक एक की जाति के अनुसार हैं, पृथ्वी पर उगें," और वैसा ही हो गया। [12]इस प्रकार पृथ्वी से हरी घास, और छोटे छोटे पेड़ जिनमें अपनी अपनी जाति के अनुसार बीज होता है, और फलदाई वृक्ष जिनके बीज एक एक की जाति के अनुसार उन्हीं में होते हैं उगे: और परमेश्वर ने देखा कि अच्छा है। [13]तथा सांझ हुई फिर भोर हुआ। इस

प्रकार तीसरा दिन हो गया।

आयतें 9, 10. वर्णन करनेवाला लेखक बादलों के "जल" से धरती के **जल** की ओर मुड़ता है। धरती मनुष्य और जानवरों के लिए एक रहने का स्थान बनने के लिए ठहराई जाती है (1:24-31); इससे पहले कि वह जानवर और मानवजाति के लिए निवास स्थान बनें, **सूखी भूमि** को **जल** से अलग किया गया। परमेश्वर ने धरती पर रहनेवालों के लिए एक सीमा बनाई। परमेश्वर ने सूखी भूमि को **पृथ्वी** कहा तथा इकट्ठा हुआ जल को **समुद्र** कहा। फिर परमेश्वर ने अपने कार्य को **अच्छा** कहा।

आयतें 11-13. धरती पर रहनेवाले जानवरों और मनुष्य के लिए न केवल सूखी भूमि की परंतु उनके जीवन निर्वाह के लिए हर प्रकार की **वनस्पति** की आवश्यकता थी। **परमेश्वर** ने **पृथ्वी** को आज्ञा दी कि वह बहुत से **वृक्ष** उपजाए। यह उत्पादक शक्ति पृथ्वी को देवी (धरती माँ) नहीं बनाती है, जैसे कुछ कहते हैं। धरती के पास अपनी कोई शक्ति नहीं है कि वह अपने आपसे पेड़ पौधों को उपजा सके; बल्कि केवल परमेश्वर ही है जो अपने शब्द की रचनात्मक शक्ति के द्वारा पौधे के जीवन को उगने देता है। यह भजनकार के शब्दों से मिलता है जो कहता है, "तू पशुओं के लिये घास, और मनुष्यों के काम के लिये अन्न आदि उपजाता है, और इस रीति भूमि से वह भोजन-वस्तुएं उत्पन्न करता है" (भजन 104:14)।

परमेश्वर ने पेड़-पौधों को उन्हीं में के **बीज की एक एक की जाति** के द्वारा उनको निरंतर और बहुत गुणा बढ़ने का प्रबंध किया ताकि मनुष्यों और जानवरों के लिए पर्याप्त भोजन हो सके। यह पृथ्वी के हर प्रकार के वातावरणों में पेड़-पौधों के भविष्य में बढ़ने और उसके अनुकूल बदलने की क्षमता को भी प्रदान करता है।

यह सब पूर्वीय प्राचीन की पौराणिक कथाओं से बिलकुल विपरीत है। उदाहरण के लिए, कनान में, यह माना जाता था कि बाल (उपजाऊ देवता) साल के अंत में, मोट ("मृत्यु" का देवता) के हाथों मारा गया, जिससे कि ग्रीष्मकाल की कटनी के बाद फसल बर्बाद और खत्म हो गई। फिर बाल को मृत्यु के देवता के द्वारा नीचे गहरे कुंड में ले जाया गया; परंतु वसन्त ऋतु के समय देवी अनाथ बाल की पत्नी ने उसे लहूलुहान वाले युद्ध में मोट को मारकर बचा लिया। इसके पश्चात, बाल पुनर्जीवित हुआ और अनाथ के साथ वैवाहिक सम्बंध हुआ, और उनके लैंगिक सम्बंध से पृथ्वी पर उपजाऊपन फिर से लौट आया, नई फसल और मनुष्य तथा पशुओं में नया जीवन उत्पन्न हुआ।[9]

कई प्राचीन धर्मों में इसी प्रकार की काल्पनिक कहानियां और उपजता के रीति रिवाज़ हैं जिसमें आराधकों और पवित्र वेश्याओं के बीच लैंगिक सम्बन्ध होता है (देखें होशे 4:11-14)। इन भ्रष्ट प्रथाओं को इसलिए बनाया गया ताकि देवता इनसे प्रेरित होकर वे भी ऐसा ही करें ताकि भरपूरी से उपज और फल तथा मनुष्यों और पशुओं में भी ज़्यादा से ज़्यादा बच्चे पैदा हों। इन भ्रष्ट उपजता के विवरण से बिलकुल अलग, उत्पत्ति का लेख यह बताता है कि कायनात के

सर्वश्रेष्ठ परमेश्वर ने सूखी भूमि को समुद्र से अलग किया और उसने हर प्रकार के **फल** और उपज को पैदा करने के लिए उपजाऊ धरती (पौष्टिकता से भरपूर) की रचना की। इसके बाद उसने कई प्रकार के बीजों के द्वारा जिनमें जीवन था, धरती के उपजाऊपन को निरन्तरता प्रदान की - और यह सब एक ही सृष्टिकर्ता, जीवन के सच्चे परमेश्वर के द्वारा हुआ। तब **तीसरे दिन** के अंत में, परमेश्वर ने जो कुछ रचा उसे **अच्छा** कहा।

दिन 4: सूर्य, चंद्रमा और तारों का आकाश में स्थिर किया जाना (1:14-19)

[14]फिर परमेश्वर ने कहा, "दिन को रात से अलग करने के लिये आकाश के अन्तर में ज्योतियां हों; और वे चिन्हों, और नियत समयों और दिनों, और वर्षों के कारण हों; [15]और वे ज्योतियाँ आकाश के अन्तर में पृथ्वी पर प्रकाश देनेवाली भी ठहरें," और वैसा ही हो गया। [16]तब परमेश्वर ने दो बड़ी ज्योतियाँ बनाईं; उन में से बड़ी ज्योति को दिन पर प्रभुता करने के लिये और छोटी ज्योति को रात पर प्रभुता करने के लिये बनाया; और तारागण को भी बनाया। [17]परमेश्वर ने उनको आकाश के अन्तर में इसलिये रखा कि वे पृथ्वी पर प्रकाश दें,[18]तथा दिन और रात पर प्रभुता करें, और उजियाले को अन्धियारे से अलग करें: और परमेश्वर ने देखा कि अच्छा है। [19]तथा साँझ हुई फिर भोर हुआ। इस प्रकार चौथा दिन हो गया।

आयतें 14, 15. इस पाठ में मनुष्य की सृष्टि को छोड़ - सूर्य, चंद्रमा और तोरों - की रचना का वर्णन और सब वस्तुओं से अधिक किया गया है और यह वर्णन बार बार आता है। चौथे दिन के वर्णन को अधिक लिखा गया है, यह इसलिए हो सकता है क्योंकि प्राचीन युग के लोग आकाश गण को अधिक महत्व देते थे। मेसोपोटामिया, फिलिस्तीन और मिस्र में सूर्य, चंद्रमा और तारों को देवता मानकर पूजा की जाती थी जो मनुष्य और देशों का भविष्य और जीवन नियंत्रण करते थे।

उत्पत्ति का लेखक इन सबको **ज्योतियां** मानता है जो परमेश्वर के द्वारा रचि गई हैं ताकि इन तीन कार्यों को कर सकें: (1) इन्हें, **"दिन को रात से अलग करना"** था। (2) इन्हें **ऋतु**, **दिन** और **वर्षों** के बदलने का **चिन्ह** ठहरना था। (3) इन्हें **पृथ्वी पर प्रकाश देना** था। प्राचीन लोगों की इन आकाशगणों के लिए धार्मिक भक्ति थी, इस दृष्टिकोण के विपरीत बाइबल का विवरण बताता है कि वे कोई देवी देवता नहीं हैं और न ही वे कोई अलग सी वस्तुएं हैं। न ही वे हमेशा के लिए हैं; इसके विपरीत, वे एकमात्र परमप्रधान परमेश्वर के द्वारा रची गईं हैं - सेवा करवाने के लिए नहीं बल्कि सेवा करने के लिए ताकि वे उसकी इच्छा को पूरी करें जिसने उसको रचा है (देखें भजन 104:19-23)।

आयतें 16-19. लेखक उसी समय के संदर्भ में जहां तारागणों की पूजा होती

थी, इस दृष्टिकोण से लिख रहा था और यह उसके शब्दों के प्रयोग के द्वारा इन आयतों में देखने को मिलता है। आरम्भ में उसने असामान्य भाव का प्रयोग किया, **सूर्य:** (שֶׁמֶשׁ, *शेमेश)* शब्द के स्थान पर **बड़ी ज्योति**। दूसरा, उसने चंद्रमा के लिए सामान्य शब्द (יָרֵחַ, *यारीच)* का प्रयोग नहीं किया बल्कि उसके स्थान पर **छोटी ज्योति** लिखा। सम्भवत: उसने "सूर्य" और "चंद्रमा" के लिए सामान्य शब्दों का प्रयोग नहीं किया बल्कि दूसरे शब्दों का प्रयोग किया क्योंकि दूसरी सेमेटिक भाषा में ये शब्द देवताओं के नाम थे। बेथ-शेमेश और यरीहो जैसे कुछ कनानी शहर अपने नाम में मूर्तिपूजा के महत्व को समेटे थे।[10]

हालांकि ये मूर्तिपूजावाले नाम कई सदियों तक प्रतिज्ञा वाले देश में प्रयोग होते रहे, परंतु उत्पत्ति का लेखक अपने लोगों को यह स्मरण दिलाना चाहता था कि उनके भविष्य का उत्तर सूर्य, चंद्रमा और **तारे** नहीं दे सकते थे परंतु उनका उत्तर केवल एकमात्र सच्चे परमेश्वर के पास था जिस ने सब कुछ बनाया। तारागण केवल आकाश में ही **प्रभुता** ("शासन" या "राज्य करना"; KJV; ASV) करते थे ताकि वे **दिन** और **रात** के लिए और ऋतुओं (दिनों और वर्षों) के लिए चिन्ह ठहरें। प्राचीन लोगों को इन तारागणों की पूजा करने की कोई आवश्यकता नहीं थी क्योंकि ये साधारण सृष्टि की रचना के भाग थे और सृष्टिकर्ता की महिमा की साक्षी देने के लिए थे (भजन 19:1-6)।

पिछले दिनों में परमेश्वर के कार्य को ध्यान में रखते हुए, लेख बताता है कि जो कुछ **चौथे दिन** में रचा गया वह **अच्छा** था। चौथे दिन में सूर्य, चंद्रमा और तारों (ज्योति देनेवालों) का रचा जाना और पहले दिन में उजियाला और उसको अंधकार से अलग किया जाना, दोनों में समानांतर था।

दिन 5: आकाश और जल समुद्री जीव जन्तुओं और पक्षियों से भर गए (1:20-23)

[20]फिर परमेश्वर ने कहा, "जल जीवित प्राणियों से बहुत ही भर जाए, और पक्षी पृथ्वी के ऊपर आकाश कें अन्तर में उड़ें।" [21]इसलिये परमेश्वर ने जाति जाति के बड़े बड़े जल-जन्तुओं की, और उन सब जीवित प्राणियों की भी सृष्टि की जो चलते फिरते हैं जिन से जल बहुत ही भर गया, और एक एक जाति के उड़नेवाले पक्षियों की भी सृष्टि की: और परमेश्वर ने देखा कि अच्छा है। [22]और परमेश्वर ने यह कहके उनको आशीष दी, "फूलो-फलो, और समुद्र के जल में भर जाओ, और पक्षी पृथ्वी पर बढ़ें।" [23]तथा सांझ हुई फिर भोर हुआ। इस प्रकार पांचवां दिन हो गया।

आयत 20. दूसरे और पाँचवें दिन के बीच में हम एक सम्बंध को देख सकते हैं। दूसरे दिन, परमेश्वर ने ऊपर और नीचे के जल को आकाश के द्वारा अलग किया ताकि विभिन्न प्रकार के जीव जन्तुओं के लिए निवास और सही वातावरण प्रदान कर सके। फिर पाँचवें दिन, उसने आसमान (**आकाश में खुला हुआ फैलाव**)

में उड़ने के लिए **पक्षियों** को रचा और सागर, समुद्र तथा नदियों (नीचे के **जल**) में रहने के लिए जल-जन्तुओं को बनाया।

यहां बताया गया है कि **जीव-जन्तुओं** से जल **बहुत ... भर** गया। क्रिया "भरना" (שָׁרַץ, *शरातस)* उसके सबंधित संज्ञा - समूहवाचक बहुवचन - "बड़ी संख्या में एकत्रित झुण्ड" (שֶׁרֶץ, *शेरेत्स)* के साथ प्रयोग किया गया है, जिसका यहां अर्थ है "झुण्ड में चलनेवाले।"[11] *शेरेत्स* उन जन्तुओं को कहते हैं जो बहुत जल्दी चलते हैं जैसे कीड़े, चूहे, छोटे रेंगनेवाले जंतु और छिपकलियां। इस संदर्भ में यह शब्द जल जन्तुओं और आयत 21 के "बहुत बड़े समुद्री जानवरों" को भी संबोधित करता है।

"जीवित प्राणी" (נֶפֶשׁ חַיָּה, *नेपेस शायाह)* शब्द "बड़ी संख्या में एकत्रित झुण्ड" की समानता में प्रयोग हुआ है। यह वाक्यांश सबको 1:20, 21 में जल के जीव जन्तुओं को, 1:24 में धरती के जानवरों को, 9:10 में पशु और पक्षियों को, 2:7 में आदमी को, और 9:16 में जानवरों को सम्मिलित करता है। यह सब जीव जन्तुओं को जो जीवन का श्वास लेते हैं सम्बोधित करता है (देखें टिप्पणियां 2:7)।

आयतें 21-23. इस अध्याय में 1 आयत से लेकर "*बारा"* शब्द ("बनाना") नहीं मिलता है परंतु यह 21 आयत में मिलता है जहां पर **परमेश्वर द्वारा रचे गए** तीन मुख्य प्रकार के जन्तुओं की सूची दी गई है। वहाँ पर, पानी में तैरनेवाली छोटी मछलियाँ थीं और **रेंगनेवाले जीव** जो समुद्र के तट पर रेंगते थे। फिर वहाँ पर आकाश में उड़नेवाले **पक्षी** थे। अंत में, तीसरे झुण्ड में लेखक **समुद्र के बड़े जानवरों** की ओर संकेत कर रहा था (הַתַּנִּינִם הַגְּדֹלִים; *हाथथान्निनिम हागेडोलिम)*।

इब्रानी शब्द תַּנִּין *(थान्निम)* के लिए मूल शब्द का अनुवाद "समुद्री विरूप प्राणी" है जिसका अर्थ "सर्प" या "अजगर"[12] और उसे सांप (निर्गमन 7:9), मगरमच्छ (यहेजकेल 29:3),या किसी और प्रकार का शक्तिशाली जीवित प्राणी (यिर्मयाह 51:34)। यह काव्य या भविष्यवाणी के साहित्य में रूपक के समान प्रयोग किया गया है, जहां परमेश्वर अपने शत्रुओं पर विजय प्राप्त करता है (अय्यूब 7:12; भजन 74:13; यशायाह 27:1; 51:9)। लेखक सृष्टि के विवरण में, बाद के भाव में यह शब्द प्रयोग नहीं कर रहा है बल्कि सचमुच के जल जन्तुओं के भाव में जैसे व्हेल, दरियाई घोड़ा, मगरमच्छ और अन्य बड़े जानवर जो समुद्र में या उसके पास पाए जाते हैं।

थान्निम ("समुद्री विरूप प्राणी") परमेश्वर के शत्रु नहीं थे जिन्हें उसको हराना था, जैसे कि मूर्तिपूजावाली झूठी कथाओं में; बल्कि वे उसकी रचना के भाग थे और उसने उनको **अच्छा** कहा। दूसरे जानवरों के सामान वे भी प्रजनन शक्ति से **आशीषित** थे जिससे वे **फूले-फले और समुद्र के जल में भर गए।** जैसे ही **पाँचवें दिन** का अंत हुआ, "आशीष" की विचारधारा, धर्मविज्ञान में मुख्य विषय के रूप में उभर कर आई जो उत्पत्ति के बाकी भागों में मिलती है। यह किताब परमेश्वर की प्रतिज्ञा का पूरा होने, और अपनी रचना को आशीषित करने की इस

कहानी का वर्णन करती है।

दिन 6: मनुष्य और जानवरों का रचा जाना (1:24-31)

यहाँ पर अंतिम दिन की सृष्टि का वर्णन किया गया है। पिछले पांच दिनों से छठे दिन को अधिक विस्तार से बताया गया है क्योंकि परमेश्वर का प्रतापी कार्य मनुष्य और धरती के जानवरों की रचना, अपनी चरम सीमा पर पहुंच गया। तीसरे दिन, सूखी भूमि और कई प्रकार के पेड़ पौधे हुए, इसी प्रकार छठे दिन, जानवरों (1:24, 25) और मनुष्य की (1:26-28) ताकि वे पृथ्वी में भर जाएं सामान रचना हुई। साथ ही साथ अनुग्रह के उपहार के रूप में, परमेश्वर ने उनके जीवन निर्वाह के लिए भोजन के रूप में फसलें दीं ताकि वनस्पति उनके लिए उगाए (1:29, 30)। पहले अध्याय के साथ, यह भाग परमेश्वर के निष्कर्ष से समाप्त होता है कि सब कुछ जो उसने रचा "बहुत अच्छा" था (1:31)।

धरती के जानवरों की रचना (1:24, 25)

[24]फिर परमेश्वर ने कहा, "पृथ्वी से एक एक जाति के जीवित प्राणी, अर्थात् घरेलू पशु, और रेंगनेवाले जन्तु, और पृथ्वी के वनपशु, जाति जाति के अनुसार उत्पन्न हों," और वैसा ही हो गया। [25]इस प्रकार परमेश्वर ने पृथ्वी के जाति जाति के वन-पशुओं को, और जाति जाति के घरेलू पशुओं को, और जाति जाति के भूमि पर सब रेंगनेवाले जन्तुओं को बनाया: और परमेश्वर ने देखा कि अच्छा है।

आयतें 24, 25. इन दो आयतों में, लेखक परमेश्वर द्वारा रचे गए तीन प्रकार के धरती के जानवरों (जीव जन्तुओं) के विषय में वर्णन करता है। (1) **पालतू पशु** जो कि घास और पेड़ पौधों से अपना पेट भरते हैं। (2) **रेंगनेवाले जीव** जिन्हें कीड़े, सांप, छिपकलियाँ और छोटे चार पैर वाले जीव कहा गया। (3) **धरती के जानवर** अर्थात हर प्रकार के जंगली जानवर। परमेश्वर ने उन सबको **उनकी जाति के अनुसार** रचा। जिस प्रकार उसने पेड़, पौधों, जल के प्राणियों और पक्षियों का वर्गीकरण किया, ठीक उसी प्रकार उसने हर प्रकार के धरती के जानवरों को रचा। सृष्टिकर्ता ने अपनी सब प्रकार की रचना के लिए एक सीमा को निर्धारित किया। फिर, उसने अपनी रचना को निरंतर बढ़ाने के लिए, हर प्रकार के पेड़ पौधों और जीव जन्तुओं में एक रचयिता को बनाया। और जब परमेश्वर ने अपने कार्य को देखा तब **उसे अच्छा कहा**।

परमेश्वर के स्वरूप में मनुष्य की सृष्टि (1:26-28)

[26]फिर परमेश्वर ने कहा, "हम मनुष्य को अपने स्वरूप के अनुसार अपनी समानता में बनाएं; और वे समुद्र की मछलियों, और आकाश के पक्षियों, और घरेलू पशुओं, और सारी पृथ्वी पर, और सब रेंगनेवाले जन्तुओं पर जो पृथ्वी पर

रेंगते हैं, अधिकार रखें।" [27]तब परमेश्वर ने मनुष्य को अपने स्वरूप के अनुसार उत्पन्न किया, अपने ही स्वरूप के अनुसार परमेश्वर ने उसको उत्पन्न किया; नर और नारी करके उसने मनुष्यों की सृष्टि की। [28]और परमेश्वर ने उनको आशीष दी, और उनसे कहा, "फूलो-फलो, और पृथ्वी में भर जाओ, और उसको अपने वश में कर लो; और समुद्र की मछलियों, तथा आकाश के पक्षियों, और पृथ्वी पर रेंगनेवाले सब जन्तुओ पर अधिकार रखो।"

आयत 26. मनुष्य की रचना में, सृष्टि का वर्णन अपनी चरम सीमा पर पहुँचता है क्योंकि परमेश्वर ने उसे अपने **स्वरूप** (צֶלֶם, *सेलेम)* और अपनी **समानता** (דְּמוּת, *देमुथ)* में सृजा था। शारीरिक रूप से मनुष्य परमेश्वर के समान नहीं था; परंतु उसकी रचना में, लोग उसके आत्मिक, बौद्धिक और नैतिक गुणों में भागी हैं।

परमेश्वर के लिए इब्रानी शब्द (אֱלֹהִים, *इलोहीम)* बहुवचन में है। हालांकि उत्पत्ति का लेखक ईश्वरों के बहुवचन में विश्वास नहीं रखता था, जैसे कि मूर्तिपूजा के पौराणिक कथाओं में था, उसने क्रिया के प्रथम पुरुष के बहुवचन **बनाना** का प्रयोग किया। नि:संदेह उसने इसका प्रयोग इसलिए किया ताकि क्रिया, अपने बहुवचन विषय "परमेश्वर" से सम्बन्धित हो सके। फिर भी, इसका कारण विवाद का विषय है, यह इसलिए कि उत्पत्ति 1 में अन्य स्थानों पर, बहुवचन संज्ञा *इलोहीम* के साथ एकवचन क्रिया का प्रयोग किया गया है।[13]

एक प्रचलित सुझाव यह है कि लेखक 1:26 में बहुवचन का प्रयोग परमेश्वर के प्रताप को, उसके गुण और शक्तियों की परिपूर्णता के भाव में जो प्राचीन लोग सोचते थे कि उसके परमेश्वरत्व में मिले हुए हैं, जोर देने के लिए किया। अतः ऊपर की आयत की संभावना से अलग, वचन कहीं पर भी इस प्रकार से बहुवचन का प्रयोग प्रदर्शित नहीं करता है कि सर्वश्रेष्ठ ने आज्ञा देने के लिए इसका प्रयोग किया।[14] इसके अलावा, यहाँ पर बहुवचन का प्रयोग करने का विचार परमेश्वर के राजकीय सम्मान को रेखांकित करने के लिए जिससे कोई सहमत नहीं है, क्योंकि इस अनुच्छेद का विषय परमेश्वर और मनुष्य के बीच के विशेष सम्बंध को बताता है। इसका केन्द्र बिंदु परमेश्वर के गुणों के प्रताप को नहीं बल्कि जीवित प्राणी का अपने सृष्टिकर्ता के स्वरूप में रचा जाना है।

आगे के विचार के साथ, दूसरों ने प्रथम पुरुष बहुवचन का (**हम** और **हमारा**) के प्रयोग की मांग उस समय के लिए की है जब परमेश्वर को पुराने नियम में त्रिएकता के सिद्धांत के प्रमाण के रूप में सम्बोधित किया जाए। यद्धपि यह दूसरी शताब्दी ई. तक नहीं था कि मसीहियों ने उत्पत्ति 1:26 का प्रयोग, परमेश्वरत्व में पिता, पुत्र और पवित्र आत्मा के बहुवचन का अर्थ समझाने के लिए किया। हालांकि, नए नियम में इस सिद्धांत की सहमति देने के लिए कई आयतें हैं।[15] फिर भी, किसी प्रेरित लेखक ने सृष्टि के विवरण में त्रिएक परमेश्वर को समझाने के लिए "हम" और "हमारा" का बहुवचन प्रयोग नहीं किया। इसलिए हम इस प्रकार का दावा करने के लिए हिचकिचाते हैं, जहां इस प्रकार

की व्याख्या के लिए बाइबल में कोई पूर्व उदाहरण नहीं है।

1:26 की अंतिम समझ, जिस पर हमारा विशेष ध्यान होना चाहिए और वह पुराने नियम में ही है कि परमेश्वर को हमेशा एक महान राजा के रूप में सम्बोधित किया गया है जो कि स्वर्गदूतों की मण्डली के बीच अपने सिंहासन पर विराजमान है। भविष्यवक्ता मीकायाह ने कहा, "इस कारण तू यहोवा का यह वचन सुन! मुझे सिंहासन पर विराजमान यहोवा और उसके पास दाहिने बायें खड़ी हुई स्वर्ग की समस्त सेना दिखाई दी है।" तब यहोवा ने पूछा, "अहाब को कौन ऐसा बहकाएगा कि वह गिलाद के रामोत पर चढ़ाई करके खेत आए?" (1 राजा 22:19, 20)। तब उनमें से एक आत्मा उस उद्देश्य को पूरा करने के लिए उसके पास आई ताकि इस्राएल के उत्तरी राज्य के दुष्ट राजा आहाब को दण्ड मिल सके। दूसरा अध्याय जहां पर स्वर्ग की समस्त सेना के मध्य परमेश्वर को एक सर्वश्रेष्ठ राजा के समान दर्शाया गया है, वह (भजन 89:5-7) है। यहाँ पर भजनकार कहता है "पवित्र लोगों की सभा" स्वर्ग में उसकी महिमा करती है और फिर उसके बाद वह कहता है कि "शक्तिशाली के पुत्रों" ("स्वर्गदूतों"; NIV; NRSV) में से कोई भी उसके तुल्य नहीं है जिससे उसकी उपमा दी जाए क्योंकि वह "पवित्र लोगों की सभा में भययोग्य परमेश्वर है।"

अंत में, यशायाह 6:1-8 में परमेश्वर को एक महान राजा के रूप में "सिंहासन पर विराजमान, ऊँचे पर और उसके वस्त्र के घेर से मंदिर भरा हुआ" दर्शाया गया है। वह सारापों (स्वर्गीय जीवों) की सेना से घिरा हुआ है जो उसकी प्रशंसा करते हैं और उसकी इच्छा को पूरी करने के लिए तत्पर रहते हैं (यशा. 6:1-3, 6, 7)। यशायाह ने परमेश्वर की आवाज़ सुनी, "मैं किसको भेजूँ, और हमारी ओर से कौन जाएगा?" (यशा. 6:8), दर्शन में, परमेश्वर के प्रश्न में स्वर्गदूतों की स्वर्गीय सभा भी सम्मिलित है जिसमें प्रथम पुरुष बहुवचन "हम" है।

पिछली आयतों को ध्यान में रखते हुए, यह समझने के बजाय कि उत्पत्ति 1:26 त्रिएकता को सम्बोधित कर रहा है, बल्कि वह यह दर्शाता है कि परमेश्वर अपनी स्वर्गीय सेना के साथ सम्मेलन में क्रियाशील है। इसलिए स्वर्गदूत सृष्टि के समय सहभागी थे - सृष्टिकर्ता के साथ में नहीं परंतु साक्षी के रूप में, जो परमेश्वर ने बनाया और उसकी महिमा कर रहे थे। परमेश्वर ने इनके विषय में तब उल्लेख किया जब वह अय्यूब से काव्यात्मक प्रश्नों को पूंछता है "जब मैं ने पृथ्वी की नींव डाली, तब तू कहाँ था? ... उसकी नींव कौन सी वस्तु पर रखी गई, या किसने उसके कोने का पत्थर बिठाया, जब कि भोर के तारे एक संग आनन्द से गाते थे और परमेश्वर के सब पुत्र जयजयकार करते थे? (अय्यूब 38:4-7)।[16]

आयत 27. आयत 26 परमेश्वर का कथन है तथा आयत 27 लेखक की सूचना है। वह अब्बा के रूप में दोहराव का प्रयोग करता है ताकि अपनी बातों पर ज़ोर दे सके:

A1: **परमेश्वर ने मनुष्य को रचा**
B1: **अपने ही स्वरूप में,**
B2: **परमेश्वर के स्वरूप में**
A2: **उसने उसको रचा।**

परमेश्वर द्वारा रचि मानव जाति में उसका "स्वरूप" *(सेलेम)* और "समानता" (*देमुथ;* 1:26) कैसे देखी जा सकती है? इस विचार को हम कई तरह से समझ सकते हैं।

पहला शब्द, *सेलेम,* मूर्तियों को सम्बोधित करता है। परमेश्वर के नियम के अनुसार इस प्रकार के रूपकों का प्रयोग करना मना था (गिनती 33:51, 52)।[17] हालांकि कई पुराने नियम के इतिहास में शुरू से लेकर अंत तक परमेश्वर के लोग अपने झूठे देवताओं को छोड़ने के लिए तैयार नहीं थे। इसलिए प्रभु ने यरूशलेम और यहूदा के अंत की आज्ञा सुनाई ताकि उसके मूर्तिपूजक लोग अपनी बनाई हुई प्रतिमा के साथ नाश हो जाएं (यहेज. 7:3, 20, 24-27)।

सेलेम ("रूपक") का प्रयोग उत्पत्ति 5:3 में, दूसरे भाव शारीरिक रूप में होता है और वह *देमुथ* ("समानता") शब्द को भी सम्मिलित करता है जो कि 1:26 में हमें मिलता है। आदम की वंशावली को बताते समय, लेखक कहता है, "जब आदम एक सौ तीस वर्ष का हुआ, तब उसके द्वारा उसकी समानता *[देमुथ]* में उस ही के स्वरूप *[सेलेम]* के अनुसार एक पुत्र हुआ। उसने उसका नाम शेत रखा" (5:3)। इस कथन का स्वाभाविक अर्थ यह है कि पिता और पुत्र के शारीरिक रूप में बहुत समानता थी। *सेलेम* और *देमुथ* शब्द का प्रयोग इस विचार को बताने के लिए किया गया है कि पुत्र, पिता के समान दिखता है।

दूसरी आयतों में, *सेलेम* शब्द का कोई स्पष्ट अर्थ नहीं है परंतु इससे कहीं और अधिक आत्मिक रूप में है। भजनकार जब जीवन के कम समय के विषय में बताता है तब वह यह कहकर विलाप करता है कि उसके जीवन का समय परमेश्वर की दृष्टि में कुछ भी नहीं है:

> सचमुच सब मनुष्य कैसे भी स्थिर क्यों न हों तौभी व्यर्थ ठहरे हैं [הֶבֶל, *हेबेल*]। सेला।
> सचमुच मनुष्य छाया सा चलता फिरता है [*सेलेम*];
> सचमुच वे व्यर्थ घबराते हैं [*हेबेल*];
> वह धन का संचय तो करता है परन्तु नहीं जानता कि उसे कौन लेगा! (भजन 39:5, 6)।

भजन संहिता 39 में, यह स्पष्ट है कि *सेलेम* जिसका अनुवाद "छाया" है वह *हेबेल* जिसे "स्वांस" और "कुछ-नहीं" कहा गया है उसके सामान है। दोनों इब्रानी शब्द उसको सम्बोधित करते हैं जिसका शारीरिक रूप नहीं है।

इसी प्रकार भजन संहिता 73:20 में, भजनकार दुष्ट की तुलना "एक स्वप्न के सामान [קִיץ, *कालोम]* जब कोई नींद से जागता है" उससे करता है और कहता

है कि परमेश्वर उसको "छाया *[सेलेम]* सा समझकर तुच्छ जानेगा।" यहां, "स्वप्न" *(कालोम)* और "छाया" *(सेलेम)* में समानता है, जो कि (NRSV) में "प्रेत" और (NIV) में "भ्रम" अनुवाद हुआ है। यह संकेत करता है कि कुछ संदर्भों में, *सेलेम* निराकार या देह रहित है, जिसका कोई भौतिक रूप नहीं है इसके विषय में बताता है परंतु स्वाभाविक रूप में यह आत्मिक है।

दूसरा शब्द "समानता" (*देमुथ;* 1:26) का प्रयोग हुआ है जो मनुष्य में परमेश्वर के स्वरूप का वर्णन करता है। यह भी शारीरिक रूप के विचार को बताता है। वह यशायाह 40:18, 19 के एक प्रश्न में मिलता है जहाँ परमेश्वर ने यह पुष्टि की है कि उसके सामान आकाश और पृथ्वी में कोई भी नहीं है जिससे उसकी तुलना की जा सकती है। लेख में, क्रिया דָּמָה *(दामाह)* और संज्ञा का रूप, दोनों एक ही मूल शब्द (*देमुथ*) से लिए गए हैं और एक दूसरे के बाद आते हैं:

> तुम परमेश्वर को किसके समान [*देमुथ*] बताओगे और उसकी उपमा [*दामाह*] किस से दोगे? मूरत! कारीगर ढालता है, सोनार उसको सोने से मढ़ता और उसके लिये चाँदी की सांकलें ढालकर बनाता है।

दूसरे शब्दों में, कोई भी शारीरिक रूपक या मनुष्य के द्वारा कोई ऐसी समानता/प्रतिमा नहीं है जिससे परमेश्वर के सच्चे स्वभाव के विषय में बताया जा सके।

दस आज्ञाओं में, इस्राएल को परमेश्वर की मूर्ति और उसको दर्शाने के लिए किसी भी प्रकार की प्रतिमा बनाने के लिए जो आकाश और पृथ्वी में है, मना किया था (निर्गमन 20:3-5; व्यव. 5:7-9)। प्रतिज्ञा के देश में प्रवेश करने से पहले मूसा ने इस्राएलियों को समझाया था इस बात से सावधान रहें: "इसलिये तुम अपने विषय में बहुत सावधान रहना। क्योंकि जब यहोवा ने तुम से होरेब पर्वत पर आग के बीच में से बातें कीं तब तुम को कोई रूप न दिखाई पड़ा" (व्यव. 4:15)। उन्हें मनुष्य (पुरुष या स्त्री) और पशु (जानवर, रेंगनेवाले जीव, पक्षी, या मछली) और न ही आकाश के तारागण (सूर्य, चंद्रमा या तारे) के रूप में या उनकी समानता में कोई भी "मूर्ति खोदकर" नहीं बनानी थी (व्यव. 4:16-19)।

कई बार परमेश्वर को राजा के रूप में जो सिंहासन पर विराजमान है (यशायाह 6:1) हाथों (भजन 10:12, 14), पैरों (यशायाह 60:13), मुख, आँखें और कानों (भजन 34:15, 16) के साथ दर्शाया गया है। इन वाक्यांश का अनुवाद यह समझाने के लिए किया गया है कि मनुष्य की शारीरिक देह, परमेश्वर की समानता में बनी है; और ये परमेश्वर का वर्णन रूपक के समान करते हैं न कि शाब्दिक रूप में। इस प्रकार की व्याख्या परमेश्वर के अस्तित्व को गलत समझना है जो शरीर नहीं बल्कि आत्मा है (यूहन्ना 4:24; देखें लूका 24:39)। इसलिए भजनकार लिखता है "मैं तेरे आत्मा से भागकर किधर जाऊँ? या तेरे सामने से किधर भागूँ? यदि मैं आकाश पर चढ़ूँ, तो तू वहाँ है! यदि मैं अपना बिछौना अधोलोक में बिछाऊँ तो वहाँ भी तू है!" (भजन 139:7, 8)

परमेश्वर का आत्मिक स्वभाव, मनुष्य के शारीरिक स्वभाव से बिलकुल विपरीत है। "परमेश्वर ने मनुष्य को अपने स्वरूप में रचा" यह कथन परमेश्वर के आत्मिक स्वभाव को संबोधित करता है (जो कि मनुष्य में झलकता है) तथा **पुरुष और स्त्री रचे** गए ताकि मनुष्य के शारीरिक स्वभाव पर ज़ोर दे सके। इस आयत में "आदमी" के लिए इब्रानी शब्द (אָדָם, *आदम)* है जो कि "मानवजाति" के इब्रानी शब्द से आता है और बाद में वह एक व्यक्तिगत नाम "आदम" बन गया (2:20; 3:17, 21)। इस स्थान पर और उत्पत्ति 5:1, 2 में *आदम* शब्द "पुरुष और स्त्री" को सम्मलित करता है क्योंकि दोनों ही परमेश्वर के स्वरूप और समानता में रचे गए। यद्दपि आदमी और औरत एक दूसरे से शारीरिक और लैंगिक रूप से अलग हैं परंतु पुरुष और स्त्री में परमेश्वर का स्वरूप (*आदम*, "मानवजाति") शारीरिक स्वभाव या बनावट से अलग बात को बताता है। इसके अतिरिक्त वह नैतिक भाव, आत्मिक जीवन और समझ/ज्ञान के गुणों को बताता है जो मनुष्य उसके बनाए हुए अन्य जीवित प्राणियों से नहीं बल्कि केवल अपने सृष्टिकर्ता से बाँटता है।

आयत 28. जब **परमेश्वर** ने मनुष्य को पुरुष और स्त्री के रूप में, अपने स्वरूप में बनाया तब उसने उन्हें आशीषित किया और उन्हें ज़िम्मेदारी/अधिकार दिया की **फूलें और फलें और पृथ्वी में भर जाएं**। इस कार्य में, परमेश्वर ने न केवल मानवजाति को आशीषित किया परंतु उनको इस योग्य बनाया कि वे पृथ्वी में भर जाएं जैसे उसने 1:22 में पक्षियों और जल के प्राणियों को कहा। पुरुष और स्त्री के लिए प्रजनन की आशीष, कोई प्रकृति की घटना या जीवविज्ञान की कोई प्रक्रिया नहीं है। और न यह अदन की वाटिका के पाप की ओर ले जाती है या यह पाप के दण्ड के द्वारा आई।

कोई भी प्रयास जो मानवजाति में परमेश्वर द्वारा बनाए गए इस लैंगिक सम्बंध को शारीरिक, गंदा या पाप दर्शाता है वह बाइबल की शिक्षा से बिलकुल विपरीत है। यह परमेश्वर की सृष्टि का भाग है जिसे उसने "बहुत अच्छा" कहा (1:31) जब वह अपनी बनाई हुई सृष्टि को देखता है। लैंगिक सम्बंध पाप नहीं है परंतु उसका दुरुपयोग पाप है; और यह विवाह में भी सच हो सकता है, जब कोई व्यक्ति, दूसरे को अपनी लालसा की पूर्ति के लिए उसे एक लैंगिक वस्तु समझता है। लिंग की पहचान और उसका कार्य, ये परमेश्वर के स्वभाव या उसके कार्य के कोई भाग नहीं थे, प्रजनन एक सकारात्मक रूप में विवाह की पवित्र योजना के लिए बनाया गया और यह पुरुष और स्त्री जो कि उसके स्वरूप में रचे गए उनके लिए परमेश्वर की इच्छा का एक भाग है।

"फूलो-फलो और पृथ्वी में भर जाओ" परमेश्वर की यह आज्ञा प्राचीन उपजाऊपन की रीति रिवाज़ से बिलकुल भिन्न थी। ये भ्रष्ट प्रथाएं, वेश्यावृति के गंदे कार्य के साथ देवताओं को उकसाने के लिए बनाएं गए ताकि मानवजाति, पशुओं और फसल में उपजाऊपन आए। परमेश्वर के अधिकार और आशीष ने न केवल इन प्रथाओं को व्यर्थ बल्कि इन्हें अंधविश्वास का चिन्ह और पाप ठहराया जो एकमात्र सच्चे परमेश्वर और जीवन देनेवाले के विमुख, मूर्तिपूजा की भ्रष्ट

प्रथाओं की ओर जाना हुआ जिसने मनुष्य में परमेश्वर के स्वरूप को कलंकित किया। इन भ्रष्ट प्रथाओं से विपरीत, पुरुष और स्त्री का विवाह आरम्भ से मानवजाति के लिए परमेश्वर का वरदान था और यह उनके और उनकी संतानों के लिए एक अद्‌भुत आशीष के रूप में आया।

आशीष का यह विचार हलके में नहीं लेना चाहिए। यह उत्पत्ति के मुख्य विषयों में से एक है। मुख्यतः आशीष का सम्बंध सन्तान से, पृथ्वी का फलवन्त होने से है परंतु आशीष के साथ मनुष्य का "बीज" पहले से ही बांध दिया गया था। यह विचार शुरू से लेकर अंत तक बाकी के उत्पत्ति के पुस्तक में पाया जाता है। प्रत्येक प्राणी को आशीष दी गई - उनको अपने ही लिए नहीं बल्कि समस्त संसार को परमेश्वर का अद्‌भुत वरदान देने के लिए माध्यम ठहरें।

प्रजनन के द्वारा पृथ्वी को भरने के साथ-साथ पुरुष और स्त्री के लिए परमेश्वर का दूसरा आदेश उनको **वश में रखना था; और मछलियों ... पक्षियों और** पृथ्वी के **सभी जीवित प्राणियों पर अधिकार रखें** (देखें 1:26)। पहला शब्द "वश में रखना" का अनुवाद (כָּבַשׁ, *काबाश)* किया गया है जो कि पृथ्वी को संबोधित करता है और बताता है कि शक्ति और क्षमता, वश में सम्मिलित होंगे।[18]

इस प्रकार से *काबाश* का प्रयोग बाइबल की कई आयतों में किया गया है। उदाहरण के रूप में जब राजा क्षयर्ष ने सोंचा कि हामान उसकी पत्नी रानी एस्तेर पर हमला (जबरदस्ती) करने की कोशिश कर रहा था (एस्तेर 7:8)। इस शब्द का सम्बंध सैन्य विजय और कनानी शहरों का अधीनता स्वीकार करने से भी है (गिनती 32:22; यहोशू 18:1)। इसके साथ, यह यहूदी लोगों का बंधुवाई में जाने को बताता है (2 इतिहास 28:10; नहेम्य. 5:5; यिर्म. 34:11)।

यद्यपि *काबाश* क्रिया मनुष्य के सम्बन्ध में जोर-जबरदस्ती को बताता है, परंतु उत्पत्ति 1 के संदर्भ में लोगों की आधीनता नहीं, बल्कि धरती की अधीनता है। उत्पत्ति 1:28 में धरती मनुष्य के वश में आसानी से नहीं आएगी; उसे अपनी शक्ति से सृष्टि को अपने आधीन करना होगा। विक्टर पी. हैमिल्टोन ने सोचा कि यहां पर "समझौता और खेती" के विषय में बताया गया है जो कि 2:5, 15 में भूमि को बनाना और उसे जोतने से सम्बंध रखता है।[19]

मानव जाति के लिए परमेश्वर के आदेश का दूसरा भाग यह था कि वह "मछलियों ... पक्षियों और पृथ्वी के सभी जीवित प्राणियों पर अधिकार रखें।" उत्पत्ति 1:28 में सभी प्राणियों पर मनुष्य के अधिकार रखने के लिए जो शब्द प्रयोग हुआ है वह (רָדָה, *राधाह)* है और यह सामान्य रूप से "मनुष्य के बजाय ईश्वरीय अधिकार" के लिए प्रयोग होता है।[20] इसका उदाहरण हम भजन संहिता 110:2 में देख सकते हैं जहां पर प्रभु ने सिय्योन में राजा को उसके शत्रुओं के मध्य राज्य *(राधाह)* करने के लिए उपदेश दिया। यह शब्द, इस्राएल का अपने बंधुआ शत्रुओं पर राज्य करना (यशा. 14:2) और गैरयहूदी देशों का दूसरे लोगों पर शासन और उनको सताना (यशा. 14:6) के रूप में प्रयोग हुआ है।

राधाह एक राजकीय शब्द है जो कि अधिकार और लोगों पर शासन करने

को सम्मलित करता है; हालांकि परमेश्वर के लोग शासन करते समय कठोर नहीं होने चाहिए। लैव्यव्यवस्था 25:43 में, स्वामी को अपने सेवक पर कठोरता से अधिकार *(राधाह)* जताने के लिए मना किया गया था। सुलैमान के राज्य के प्रारम्भिक वर्षों में, इस्राएल के आस-पास के अधीन राज्यों पर शांतिपूर्ण अधिकार किया गया (1 राजा 4:24)। भजनकार ने प्रार्थना किया कि न्याय और धार्मिकता के साथ राजा शाशन *(राधाह)* करे, सताए हुओं को छुड़ाए, निर्धनों पर दया और उनके जीवनों को बचाए, बेसहारों को सताव से बचाए और अपने अधिकार के निमित लोगों के बीच शांति लाए (भजन 72:1-3, 7, 8, 12-14)।

इससे स्पष्ट होता है कि इसी प्रकार का अधिकार *(राधाह)* परमेश्वर ने आरम्भ में मानवजाति को सौंप। यह मनुष्य को प्रकृति के स्रोतों का प्रयोग करने की अनुमति देता है परंतु मनुष्य को यह अधिकार नहीं देता है कि वह परमेश्वर की बनाई हुई सुंदर सृष्टि का गलत प्रयोग करे। मनुष्य को सदैव स्मरण रहना चाहिए कि हालांकि सृष्टि और जानवरों पर उसको नियुक्त किया गया है परंतु वह परमेश्वर के नीचे है और उनकी अच्छाई के लिए उन पर उसका अधिकार है, इसके अतिरिक्त कि वह कठोरता से और गलत उपयोग से उन पर अधिकार न जताए। मनुष्य को पृथ्वी और उसके प्राणियों पर दया का स्वभाव परमेश्वर के (स्वरूप) में दिखाना चाहिए। परमेश्वर ने मनुष्य को अधिकार इसलिए दिया कि वह पृथ्वी और जानवरों पर स्वामी ठहरे, और उस विश्वासयोग्य भण्डारी के सामान जो अपने स्वामी की धरोहर को सम्भाल कर रखता है, उन पर दया और ज़िम्मेदारी के साथ अधिकार चलाए।

मानवजाति और जानवरों के भोजन के लिए परमेश्वर का प्रबंध (1:29, 30)

29फिर परमेश्वर ने उनसे कहा, "सुनो, जितने बीजवाले छोटे छोटे पेड़ सारी पृथ्वी के ऊपर हैं और जितने वृक्षों में बीजवाले फल होते हैं, वे सब मैं ने तुम को दिए हैं; वे तुम्हारे भोजन के लिये हैं। 30और जितने पृथ्वी के पशु, और आकाश के पक्षी, और पृथ्वी पर रेंगनेवाले जन्तु हैं, जिन में जीवन का प्राण है, उन सब के खाने के लिये मैं ने सब हरे हरे छोटे पेड़ दिए हैं," और वैसा ही हो गया।

आयतें 29, 30. उत्पत्ति का लेखक सृष्टि का विवरण और आगे बताता है कि परमेश्वर ने सभी प्राणियों के लिए **हर प्रकार के पौधों** और फलदायक **पेड़ों** को बनाकर, उनके भोजन का प्रबंध किया। यह कथन मेसोपोटामी के विचार से बिलकुल विपरीत है जो कि यह दर्शाता है कि मनुष्य को "देवताओं की सेवा"[21] के लिए रचा गया है, अर्थात उनको भोजन प्रदान करने के लिए। गिलगामेश ग्रन्थ में यह स्पष्ट है, क्योंकि जब देवताओं ने मानवजाति को नष्ट करने के लिए जल-प्रलय भेजा तब उनको खिलाने के लिए कोई नहीं बचा। यह कहा जाता था कि जब उतनापिस्तिम (नूह के सामान जो बाबुल का था) नाव से निकलकर आया और बलिदान चढ़ाया, तथा देवता इतने भूखे थे कि वे "मक्खियों के सामान उस पर

टूट पड़े।"[22]

परमेश्वर ने **हर प्रकार के पौधों** को मनुष्य और जानवरों के लिए **भोजन** के रूप में ठहराया, इस कथन का यह अर्थ नहीं है कि सभी प्राणी पौधों को खाने तक ही सीमित थे, परंतु इससे भी अधिक इसका अर्थ यह है कि "सभी पेड़-पौधे सामान्य रूप से सभी के लिए खाने योग्य थे। यह सामान्यकरण है कि प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से सब का जीवन वनस्पति पर निर्भर है और इस आयत का उद्देश्य यह बताना है कि सभी परमेश्वर द्वारा खिलाए जाते हैं।"[23] निःसंदेह, ऐसा नहीं था कि जल-प्रलय के बाद विशेष रूप से मांस खाने के लिए अनुमति मिली (9:2-4)। हालांकि परमेश्वर ने उससे पहले भी मांस खाने पर रोक नहीं लगाई थी। यह ध्यान देने की बात है कि आदम और हव्वा ने जब अदन कि वाटिका में पाप किया तब परमेश्वर ने उन्हें चमड़े के अंगरखे बनाकर पहनाए थे (3:21)। स्वाभाविक रूप में उस घटना से यह प्रश्न उठता है कि "क्या परमेश्वर ने पहले जोड़े को जानवर का मांस खाने के लिए दिया?" यह प्रश्न बिना उत्तर के ही रहना चाहिए परंतु लेख इस बात की सम्भावना को बताता है।

मानवजाति के आरम्भ से ही यह बताया गया है कि परमेश्वर की अनुमति के द्वारा उसको बलिदान चढ़ाया जाता था (4:4)। क्या इसका अर्थ यह है कि आराधक जो परमेश्वर की वेदी पर चढ़ाता था उसमें से कुछ भाग को खाता था जैसा कि बाद में मूसा के नियम के अनुसार यह प्रथा थी? जल-प्रलय से पहले भी परमेश्वर ने नूह को आदेश दिया कि वह "शुद्ध" और "अशुद्ध" पशुओं को अलग रखे जिन्हें जहाज़ में रखना था (7:2)। क्या यह संकेत करता है कि जल-प्रलय से पहले मूसा के नियम के अनुसार, केवल मनुष्य को "शुद्ध" पशुओं को खाना और उन्हें परमेश्वर को चढ़ाना था? बिना बाइबल के आधार पर इन प्रश्नों का उत्तर नहीं दिया जा सकता है। इसमें केवल अनुमान लगाया जा सकता है, परंतु ये आयतें यह बताने की कोशिश करती हैं कि जब संसार में पाप आया तब परमेश्वर ने अपने लोगों को पशुओं को मारने, बली चढ़ाने और बलिदान में से कुछ भाग को खाने के निर्देश दिए। बाइबल में इन बातों के विषय में स्पष्ट जानकारी जल-प्रलय के बाद के लेखों में मिलता है।

परमेश्वर के द्वारा सृष्टि का मूल्यांकन (1:31)

[31]तब परमेश्वर ने जो कुछ बनाया था, सब को देखा, तो क्या देखा, कि वह बहुत ही अच्छा है। तथा साँझ हुई फिर भोर हुआ। इस प्रकार छठवाँ दिन हो गया।

आयत 31. उत्पत्ति 1:4, 10, 12, 18, 21, 25 में परमेश्वर का मूल्यांकन सूत्र बताया गया है; परंतु **छठे दिन** के अंत में, उसकी महिमा युक्त सृष्टि की परिपूर्णता को महत्व देने के लिए इसमें कुछ परिवर्तन किया गया। पहले, उसने अपने द्वारा बनाए हुए कुछ वस्तुओं के लिए "अच्छा" शब्द प्रयोग किया; परंतु अब सर्वश्रेष्ठ सृष्टिकर्ता पीछे जाकर **सब कुछ देखता है जो उसने बनाया था**। वह

बड़े उत्साह के साथ केवल उन्हें "अच्छा" ही नहीं परन्तु **बहुत अच्छा** कहा।

परमेश्वर ने "बहुत अच्छा" का गुणात्मक मूल्यांकन, मानवजाति (*आदम*, पुरुष और स्त्री को मिलाकर) के सृष्टि के बाद ही किया। मनुष्य, परमेश्वर की बनाई हुई सभी वस्तुओं के ऊपर है क्योंकि केवल वे ही सृष्टिकर्ता के स्वरूप को धारण करते हैं और पृथ्वी पर उसके प्रतिनिधि हैं (1:26-28)। मूल्यांकन में मनुष्य का सम्मिलित होना "बहुत अच्छा" मानवजाति के लिए उच्च विचार प्रस्तुत करता है, जैसा कि वह मूल रूप में रचा गया था और यह प्राचीन मेसोपोटामी के विचार से बिलकुल विपरीत है जो मनुष्य को निम्न स्तर का प्रस्तुत करती है।

बाबुल के सृष्टि ग्रन्थ में, देवताओं का राजा, मारदूक, "हिंसक जानवर" को बनाता है और कहता है, "उसका नाम 'मनुष्य' होगा। वास्तव में मैं हिंसक-मनुष्य को बनाऊंगा।" इस विवरण में मनुष्य को "हिंसक जानवर" कहकर बनाया गया क्योंकि वह किंगु के खून से बनाया गया था, जो कि देवताओं में सब से बुरा था।[24] प्राचीन मेसोपोटामी और उत्पत्ति के साहित्य की तुलना स्पष्ट है: पिछले में, मनुष्य हिंसक रूप में हिंसक किंगु देवता से आता है, जो अन्य देवताओं के विरुद्ध युद्ध में मर जाता है। अगले में, मनुष्य - परमेश्वर के स्वरूप में रचा गया - परमेश्वर की सृष्टि का भाग है जिसे वह "बहुत अच्छा" कहता है, और वह पवित्र और प्रेमी परमेश्वर द्वारा रचा गया, जो केवल उसे आशीष देना और उसके साथ सभी अच्छी वस्तुएं बाँटना चाहता था। यह उत्पत्ति के छठे दिन की सृष्टि की कहानी है।

अनुप्रयोग

सृष्टिकर्ता परमेश्वर (अध्याय 1)

उत्पत्ति की किताब परमेश्वर के सृष्टिकर्ता होने कि घोषणा के द्वारा विश्वास का आधार प्रदान करती है। परमेश्वर के अस्तित्व के विषय में धार्मिक दर्शनशास्त्र की पुस्तकों के समान इसमें बेबुनियाद तर्क नहीं हैं। जिसके प्रयोग के द्वारा कोई परमेश्वर के अस्तित्व को सिद्ध कर सके या यह कि उसने इस संसार और उसमें उत्पन्न जीवन कि सृष्टि की है यह ऐसे वैज्ञानिक विवरण या परीक्षणों को प्रस्तुत नहीं करता है। बाइबल प्रचलित प्राचीन निकट पूर्व के कट्टर बहु ईश्वरवादी पौराणिक विश्वास के विरोध के साथ आरंभ नहीं होती। यह एक सर्व सामर्थी परमेश्वर जिसने स्वर्ग, पृथ्वी और सभी जीवित प्राणियों - विशेषकर मनुष्य - कि सृष्टि की पर विश्वास के अंगीकार के साथ आरंभ होती है क्योंकि वह भला परमेश्वर है जो केवल अपनी सृष्टि को आशीष देना चाहता है।

ऐसा प्रतीत होता है कि कुछ लोग इसको एक कमजोरी के रूप में देखेंगे क्योंकि यह विश्वास को आगे रखती है और उसके कारण और वैज्ञानिक ज्ञान को अस्वीकार कर देती है। जो भी हो, वास्तविकता में यह मानवीय कारणों और प्राकृतिक पूर्वाग्रहों को जो विज्ञान के पीछे तो हैं परन्तु परमेश्वर या सृष्टि के बारे

में किसी ठोस सत्य पर पहुँच नहीं पाए उसमें से अंधविश्वास को अलग करती है। दूसरे शब्दों में, जैसा कि आरंभ में जब सृष्टि कि रचना हुई, कोई भी मानव देखने के लिए मौजूद नहीं था, तो वैज्ञानिक रूप से यह प्रमाणित नहीं किया जा सकता कि सभी चीजों की सृष्टि के लिए परमेश्वर ज़िम्मेदार है या यह सब किसी आकस्मिक घटना कि वजह से हो गई हैं। यदि कोई गवाह भी प्रस्तुत किया जाए, तो भी सृष्टि कि रचना को वैज्ञानिक प्रमाण के रूप में दोहराने का कोई भी मार्ग नहीं है। इसलिए सृष्टि और आरंभ को विश्वास की श्रेणी में ही रहना होगा।

अकस्मात घटी किसी घटना में विश्वास करने से कहीं ज्यादा सृष्टिकर्ता के रूप में परमेश्वर में विश्वास करना ज्यादा सार्थक है। यह वाक्य "आदि में परमेश्वर ने आकाश और पृथ्वी कि सृष्टि की।" (1:1) वास्तविकता में किसी प्रमाण के बिना विश्वास वचन है। इस कारण से, कुछ एक मजाक उड़ाते है और कहते हैं, "बिना किसी प्रमाण के सृष्टिकर्ता के रूप में परमेश्वर पर तुम्हारा विश्वास बस अंधकार में छलांग लगाना है; इस लिए विज्ञान में, जिसे दिखाया और प्रमाणित किया जा सकता है मैं अपना विश्वास रखूँगा।" इसलिए, यदि कोई परमेश्वर को सृष्टिकर्ता के रूप में अस्वीकार करता है तो अगला वक्तव्य केवल यह होगा, "आदि में अकस्मात घटना ने आकाश और पृथ्वी कि सृष्टि की।" दोनों ही विश्वास वचन है; कोई भी वैज्ञानिक रूप से प्रमाणित या अप्रमाणित नहीं किया जा सकता। अतः यह विश्वास और ज्ञान (विज्ञान) की बात नहीं है; परन्तु प्रश्न यह है कि फिर "किस प्रकार का विश्वास आप करेंगे?" कौन विश्वास करने के लिए ज्यादा तर्क संगत और उचित है: आकस्मिक रूप से अव्यवस्था में से सुव्यवस्था का निकल आना, निर्जीव में से जीवन का निकल आना, और अचेतन तत्व में से मानवीय चेतना का निकल आना - या कि सृष्टिकर्ता ने जटिल संसार और उसके जीवन रूप को सृजा है? अविश्वासी के लिए समस्या यह है कि न ही कोई भी जीवनोत्पत्ति कि घटना वैज्ञानिक प्रयोग के द्वारा दिखाई गई है या प्रकृति में देखी गई है, न ही ऐसा हो सका है। इसलिए, जो कोई आकस्मिक घटना में अपना विश्वास रखता है वास्तविकता में, उस धारणा में भरोसा रखते हुए जो कि ज्ञात वैज्ञानिक तथ्यों से अलग है उस के समान है जो अंधकार में अंधी छलांग लगाता है।

प्राकृतिक विश्वास कमजोर आधार पर आधारित होता है। आकस्मिक *घटना* में अवैज्ञानिक स्वभाव के विश्वास को उदाहरण में देख सकते है: यदि किसी व्यक्ति के पास रेत के लाखों कणों से भरी एक बाल्टी हो, तो कितनी बार वह उसको फर्श पर खाली करेगा कि वह अकस्मात ही सही रूप से सम्पूर्ण आजादी की घोषणा कर दे? प्रश्न के लिए उत्तर होना चाहिए क्योंकि यदि संसार के अन्त तक भी ऐसा किया जाए तो भी कोई गंभीरता से नहीं सोचेगा कि ऐसा कभी होगा। इन सब चीजों के विरुद्ध संभावना इतनी खगोलीय है कि बस उस संख्या के पीछे जीरो लगाते रहने के लिए एक बहुत बड़े शब्दकोश के समान पुस्तक लगेगी। कोई भी वास्तविकता में ऐसा होने के उम्मीद नहीं करेगा; परन्तु प्राकृतिक विज्ञान के नाम पर, हमें बताया गया है कि संसार के सौर मंडल और - पृथ्वी के जीवन प्रारूप में जो व्यवस्था और स्वरूप है - वह आकस्मिक *घटना* के

परिणाम से बढ़ कर और कुछ नहीं है। यह अंधा विश्वास कोई समझ नहीं रखता क्योंकि यह उस सब से अलग है जो हम इस संसार में देखते और महसूस करते हैं।

क्या हो यदि किसी कबाड़खाने में कोई आकस्मिक विस्फोट हो जाए, और जब धूल छटे, कबाड़ के छोटे टुकड़ों और कणों के स्थान पर किसी को वहां पर एक शानदार कम्पयूटर और मानीटर दिखे? नजदीक से देखने पर, पता चले कि ये तो यंत्र सामग्री की बड़ी संख्या और मेमोरी, साथ ही साथ संचालन प्रणाली और अनेक जटिल कार्यक्रम हो? यदि देखने वाला कबाड़खाने के मालिक से पूछे, "यह कम्पयूटर कहाँ से आया है? किसने इसको बनाया है? यह यहाँ कैसे पहुँचा?" यदि वह यह कहे, "मैं नहीं जानता यह यहाँ कैसे पहुँचा। मैंने यहाँ पर कोई ऐसा प्रमाण नहीं देखा कि किसी ने इसका निर्माण किया है। यह तो संभवतः एक आकस्मिक विस्फोटक घटना का परिणाम है।" तो पक्के तौर पर वह मालिक के जवाब को मानने को तैयार नहीं होगा। एक बार फिर, कोई भी तर्क संगत व्यक्ति, संसार के सभी कबाड़खानों में जब तक अंत नहीं हो जाता विस्फोट होते रहे, तौभी ऐसा विश्वास नहीं करेगा कि सही में ऐसा हो सकता है। प्रगतिशील व्यवस्था कभी भी अनियंत्रित अव्यवस्था से निकल कर नहीं आती। बल्कि, यह तो बौद्धिक प्रारूप और सावधानी पूर्वक निर्माण से आती है। यह कम्पयूटर और उसके कार्यक्रम या जीवन के सभी प्रकारों के साथ स्वर्ग और पृथ्वी के संदर्भ में सही है।

भजनकार कहता है, "मैं भयानक और अद्‌भुत रीति से रचा गया हूँ।" (भजन संहिता 139:14); यद्यपि, कोई भी पूर्ण रूप से यह कल्पना नहीं कर सकता कि 1990 के अंत तक जब तक वैज्ञानिक अंततः मानव जीन के तीन करोड़ सांकेतिक अंको का नक्शा नही बना पाए थे यह वक्तव्य कितना सत्य था। मानव जीवन का आरंभ माता के गर्भ में एक अण्डे के रूप में होती है। कोशिका की जटिलता और सूचनाओं की अथाह संख्या प्रत्येक में बिल गेटस माईक्रोसाफ्ट कारपोरेशन के संस्थापक को कहना पड़ा, "डी.एन.ए. एक साफ्टवेयर कार्यक्रम के समान है, जो हमारे द्वारा किसी भी किए गए आविष्कार से अधिक जटिल है।"[25] सही में, कोई भी ऐसा सुझाव नहीं देगा कि जटिल कम्पयूटर कार्यक्रम बिना किसी कुशल कारीगर की बौद्धिक रचना के आकस्मिक ही हो सकता है, इसलिए जो यह विश्वास करते हैं कि कोशिकाओं की जटिल बनावट ऐसे ही अकस्मात हो गई वह इसकी व्याख्या देने में असमर्थ हैं। असल में, यद्यपि वैज्ञानिक पाँच दशकों से प्राकृतिक कारणों की खोज में हैं जो कोशिका में डी.एन.ए. की जटिलता और जीवन के अस्तित्व के विषय में बता सके। जीवनोत्पत्ति के सिद्धान्त को सहारा देते हुए किसी भी साक्ष्य को वे अब तक प्रस्तुत नहीं कर पाए हैं।[26] वे लगातार इस आशा के विरुद्ध आशा करते हैं कि एक दिन यह सिद्ध हो जायेगा कि, "आदि में *अकस्मात* ही स्वर्ग और पृथ्वी की सृष्टि हो गई।" सृष्टिकर्ता में उनका अविश्वास जीवन के स्वभाव और उसकी उत्पत्ति से सम्बंधित किसी प्रमाण की कमी कि वजह से नहीं है, अपितु, पुरानी कहावत, "कोई भी ऐसा अंधा नहीं कि देख न सके" को उदाहरण स्वरूप प्रस्तुत करने के लिए है।

आरंभ में परमेश्वर और उद्देश्य (अध्याय 1)

सृष्टि से पहले ही परमेश्वर का मसीह में एक उद्देश्य था। जब उत्पत्ति के लेखक ने इस शब्दों को लिखा "आदि में" उसका तात्पर्य यह नहीं था कि आदि से पहले परमेश्वर के अलावा कोई नहीं था। क्रूस की परछाई में यीशु ने, पिता से प्रार्थना की और यह कहते हुए अंत किया, "तू ने जगत की उत्पत्ति से पहले मुझ से प्रेम रखा" (यूहन्ना 17:24)। यह कुछ ऐसा प्रगट करता है जो पीछे अन्ततः में ले जाता है - "आदि में" इस कथन से भी पहले। पौलुस प्रेरित, जब मसीही लोगों संबोधन करता है, कहता है, "जैसा उसने [परमेश्वर] हमें जगत कि उत्पत्ति से पहले चुन लिया कि हम उसके [मसीह] प्रेम में पवित्र और निर्दोष हों।" (इफि. 1:4); इसलिए, आरंभ से पहले, निश्चल परिस्थितियों से अलग कुछ अस्तित्व में था। चुनाव किया गया, और मसीह यीशु के द्वारा हमारी ओर से इसमें परमेश्वर कि इच्छा और विचार शामिल है।

मसीह के क्रूस द्वारा परमेश्वर ने अपने प्रेम को प्रदर्शित करने के लिए सृष्टि से पहले ही योजना बना ली थी। पुरुष और स्त्री कि सृष्टि और उनको इच्छा शक्ति देने से पहले ही परमेश्वर जानता था कि वे गलत चुनाव और पाप करेंगे; इसलिए उनको अन्ततः उद्धारकर्ता और पाप क्षमा की आवश्यकता होगी। कभी-कभी लोग पूछते हैं, "जब परमेश्वर जानता था कि मनुष्य पाप करेगा, अपने को और दूसरे को चोट पहुँचाएगा, और अंत में उसका हृदय तोड़ेगा, तो क्यों परमेश्वर ने मनुष्य को मुक्त इच्छा शक्ति के साथ सृजा?"

यही प्रश्न मनुष्य से भी पूछा जा सकता है: यदि पति पत्नी यह जानते हैं कि जिन बच्चों को वे संसार में जन्म देंगे एक समय पर अपने जीवन में वे उनकी आज्ञा नहीं मानेंगे और हो सकता है उनके हृदय तोड़ेंगे, तब क्यों लोग बच्चों को पैदा करते रहते हैं? अनाज्ञाकारी बच्चों के स्थान पर परमेश्वर और मनुष्य दोनों के लिए केवल एक मार्ग है कि वे यांत्रिक मानव (रोबोट) का संसार बनाएं जो ऐसे कार्यक्रम बद्ध हो की कभी शिकायत न करें और हमेशा जो आज्ञा उन्हें दी जाए उसके अनुसार आज्ञाकारी हों। कोई भी इस प्रकार के निर्जीव और भावनाहीन संसार में रहना नहीं चाहेगा, और परमेश्वर संभवतः कभी भी इस प्रकार की सृष्टि की संभावना का विचार नहीं करेगा। उसने ऐसे संसार की रचना की जहाँ मनुष्य को उसने अपने रूप आकार में मुक्त इच्छा शक्ति के साथ सृजा है (1:26, 27)।

सृष्टि से पहले ही परमेश्वर जानता था कि मनुष्य पाप करेगा और उसे उद्धारकर्ता कि आवश्यकता होगी। समय आने पर, उसने क्रूस कि मृत्यु के द्वारा पाप का दण्ड भरने के लिए अपने पुत्र को संसार में भेजकर अपने असीम प्रेम का प्रदर्शन किया (यूहन्ना 3:16)। यीशु की मृत्यु और पुनरुत्थान की साक्षी होने के बाद भी पतरस पिन्तेकुस्त के दिन तक एक यहूदी दर्शक के समान बना रहा जब तक परमेश्वर ने यीशु नासरी के उन चिन्हों, चमत्कारों और अद्भुत कामों को जो उसने उनके सामने किए प्रमाणित नहीं कर दिया। तब उसने घोषणा की कि यीशु की क्रूस पर मृत्यु "परमेश्वर का पूर्वज्ञान और पूर्व निश्चित योजना" के अनुसार वास्तव में हुई थी, और वह और अन्य प्रेरित उसके पुनरुत्थान और स्वर्गारोहण के

गवाह हैं जहाँ पर वह "प्रभु और मसीह" के रूप में राज्य करता है (प्रेरितों 2:22-24, 32-36)।

इसका अर्थ यह नहीं है कि परमेश्वर ने हत्यारों को उनकी इच्छा के विरुद्ध यीशु को मारने के लिए बाध्य किया। इसका सीधा सा अर्थ यह है कि परमेश्वर पहले से ही जानता था कि बुरे व्यक्ति उसके पुत्र का इनकार करेंगे। यीशु की मृत्यु कोई दु: खद घटना या दुर्भाग्यपूर्ण गलती नहीं थी; बल्कि, यह तो स्वभाव से बलिदान और "संसार कि सृष्टि के पहले से ही पूर्व ज्ञात थी" (1 पतरस 1:20)। इसी प्रकार पौलुस लिखता है, "परमेश्वर ने हमारा उद्धार किया और पवित्र बुलाहट से बुलाया है, और यह हमारे कामों के अनुसार नहीं पर उसके उस उद्देश्य के अनुसार है जो मसीह यीशु में सनातन से हम पर हुआ है।" (2 तीमु. 1:9) स्वाभाविक रूप से, संसार की सृष्टि के पहले से ही कुछ अस्तित्व में था - सम्पूर्ण अनंत: में से - और वह कुछ अपरिवर्तित और अवैयक्तिक नहीं था। इसके विपरीत, यह परमेश्वर के पुत्र उद्धारकर्ता यीशु मसीह के द्वारा मनुष्य के लिए, उसके प्रेम और अनुग्रह को प्रदान करने के लिए व्यक्तिगत उद्देश्य था (यूहन्ना 3:16)। मनुष्य को मुक्त इच्छा शक्ति प्रदान की गई या तो यीशु को मसीह प्रभु के रूप में स्वीकार कर ले या उसे अस्वीकार कर दे। हम सुसमाचार पर विश्वास, पापों से मन फिराव, यीशु मसीह को परमेश्वर के पुत्र के रूप में स्वीकार कर अपने विश्वास के अंगिकार, और उसको अपना उद्धारकर्ता मान कर उसके छुटकारा देने वाले लहू से बपतिस्मा ले कर बच सकते हैं (रोमियों 10:9-13; गला. 3:27; 1 पतरस 1:18, 19)।

केवल व्यक्तिगत परमेश्वर ही मनुष्य के जीवन को उद्देश्य और अर्थ दे सकता है। सुसमाचार के शुभ संदेश का भाग है कि परमेश्वर कोई अव्यक्तिक शक्ति नहीं है। वह न तो यूनानी दर्शन शास्त्र के निर्जीव जीवन जैसा है, न ही बिना मनोभाव, भावनाओं, चिन्ता, प्रेम या मनुष्यों के उद्देश्य के सभी कारणों और प्रभावों में पहला कारण है। न ही वह पूर्वी अनेक ईश्वरवादी धर्मों को अव्यक्तिक करता है इसलिए वे सब भी अस्तित्व में हैं, चाहें वे मूर्त या अमूर्त किसी भी अवस्था में हों। इस से बढ़ कर वह व्यक्तिगत परमेश्वर है जिसने चीजों और प्राणियों को बनाया है - विशेषकर मनुष्य को,जो उसकी स्वयं के रुप स्वरूप में रचा गया है। वह सभी लोगों को प्रेम करता है इस बात की परवाह किए बिना कि कुछ लोग प्रेम के योग्य नहीं हैं। केवल व्यक्तिगत परमेश्वर ही मनुष्य के व्यक्तित्व का व्याख्यान कर सकता है और दिव्य रुप में उसके सृजे जाने को पहचान दे सकता है। यह घूम कर, मानव सम्बन्धों को समझने और दूसरों को प्रेम और आदर के साथ व्यवहार करने की ओर ले चलता है क्योंकि वे भी परमेश्वर के रुप स्वरूप में सृजे गये हैं।

सृष्टि का एक उद्देश्य है और मानवजाति उस ओर अग्रसर है। परमेश्वर एक दिन मसीह में सब कुछ पूर्ण कर देगा (इफि. 1:10)। हमारी निर्धारित मंजिल प्रभु के समाने न्याय के सिंहासन के समक्ष उपस्थित होना है। जहाँ पर "प्रत्येक व्यक्ति को जो कुछ उसने अपनी देह में रहते हुए किया है उसके अनुसार उसका

लेखा देना होगा, चाहे वह सही था या गलत" (2 कुरि. 5:10)।

मनुष्य को बचाने का परमेश्वर का उद्देश्य मनुष्य की मुक्त इच्छा शक्ति के प्रत्युतर पर निर्भर करता है। उद्धार बिना शर्त पहले से ही निर्धारित है। "परमेश्वर नहीं चाहता कि कोई भी नाश हो बल्कि सभी मन फिराएं" (2 पतरस 3:9)। "उसकी इच्छा है कि सभी मनुष्य बचाए जाएं और सत्य के ज्ञान के समक्ष आएं" विशेषकर यह सत्य कि यीशु ही एक मात्र छुटकारा है हमारे पापों का (1 तीमु. 2:4-6)। मसीह चाहता है कि सब उसके पास आए (मत्ती 11:28), परन्तु वह किसी पर ऐसा करने के लिए दबाव नहीं बनाता। अतः प्रत्येक जो उसके सुसमाचार को सुनता है उसके पास अवसर और ज़िम्मेदारी है कि वह विश्वास के साथ आज्ञाकारिता में हो कर मसीह में एक नई सृष्टि बन जाए (मरकुस 16:16; यूहन्ना 3:3-5; प्रेरितों 2:38-40; 2 कुरि. 5:17)।

मनुष्य में परमेश्वर के स्वरूप का प्रमाण (1:26-28)

दो हजार वर्षों से धर्मविज्ञानिकों ने मनुष्य में परमेश्वर के स्वरूप को परिभाषित करने का प्रयास किया है, परंतु वे इसकी सर्वमान्य व्याख्या, जिस पर सभी सहमत हों, प्रस्तुत करने में सफल नहीं हो पाए। इस संसार में मनुष्य एक अदभुत प्राणी है और इसके गुण कि वह परमेश्वर के स्वरूप में रचा गया है, जानवरों से उसे भिन्न बनाती है।

केवल मनुष्य ही सारी पृथ्वी और प्राणी जगत पर राज्य करता है। जब परमेश्वर ने मनुष्य की सृष्टि की तो उसने उसे जानवरों पर राज करने का अधिकार दिया, परंतु वह परमेश्वर के आधीन एक पवित्र बंधन के तरह भण्डारी है। मनुष्य दो संसार के मध्य रहता हैः भौतिक और आत्मिक। जानवरों के समान, उसकी एक भौतिक देह है जो मिट्टी से बनी है और जिसे बनाए रखना ज़रूरी है। उसको भी हवा, पानी और पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है; परंतु वही एक ऐसा प्राणी है जो परमेश्वर के वाणी को सुन सकता है और परमेश्वर के समान सोच सकता है (देखें भजन 8:3-9)।

इसलिए, मनुष्य का जानवरों पर अधिकार आत्मिक है न कि भौतिक। इसका संबंध विशेषता से है न कि संख्या से। मनुष्य का मस्तिष्क नीली व्हेल से बड़ा नहीं है। वह सिंह के समान बलशाली नहीं है, न उसमें चीता के समान तीव्रता है। उसकी दृष्टि चील के दृष्टि से भी तुलना नहीं की जा सकती है। स्पष्ट है कि मनुष्य का जानवरों पर श्रेष्ठता भौतिक नहीं है जिसकी तुलना की जाए; बल्कि, यह तो आत्मिक गुण है जिसको परमेश्वर ने हरेक व्यक्ति पर बनाया है।

केवल मनुष्य ही अपनी श्रेष्ठता प्रमाणित कर सकता है। जानवर सोच सकता है, परंतु मनुष्य अपने आपको उनसे ऊँचा कर सकता है और तर्कों के विषय तर्क कर सकता है। वह जटिल प्रश्न पूछ सकता हैः "मैं कौन हूँ?"; "मैं कहाँ से आया हूँ"; "मैं यहाँ क्यों हूँ?" केवल मनुष्य को ही पहचान की समस्या है और वह अपनी उद्भव तथा जीवन के उद्देश्य ढूँढने का प्रयास करता है। जानवरों को इन समस्याओं से संघर्ष नहीं करना पड़ता है। वे प्रतिदिन ऐसे ही जीते हैं।

केवल मनुष्य ही अनुभव से सीखने की क्षमता रखता है, ज्ञान अर्जन करता है और इसे आने वाले पीढ़ी को सौंपता है। मनुष्य ही एक ऐसा प्राणी है जिसके लिए इतिहास महत्व रखता है। वह भूतकाल से आँकड़ा एकत्रित करता है और उसे आने वाले पीढ़ी को सौंपता है, इस प्रकार हर पीढ़ी पिछली पीढ़ी से अधिक ज्ञानवान हो जाता है। मनुष्य ज्ञान का संरक्षण मौखिक तथा लिखित रूप में कर सकता है ताकि उसके बच्चों तथा नाती पोतों को हर एक चीजों की खोज दोबारा न करना पड़े।

केवल मनुष्य ही जीवन के भौतिक वस्तुओं के पीछे बेचैन रहता है। संभवतः आंशिक रूप से यह सत्य है क्योंकि परमेश्वर ने "मनुष्यों के मन में अनन्त काल का ज्ञान उत्पन्न किया है" (सभो. 3:11)। (1) मनुष्य के पास जो भौतिक वस्तु है वह उससे कभी भी संतुष्ट नहीं है। वहीं दूसरी तरफ, जानवर अपनी प्राथमिक आवश्यकता के पूर्ति के साथ ही संतुष्ट है। (2) मनुष्य इस बात से कभी संतुष्ट नहीं होता है कि वह कौन है, कैसा दिखता है, क्या जानता है, क्या अनुभव करता है या वह क्या प्राप्त करता है। जानवरों को जैसे देखने, सुनने या हर बार कोई नई बात अनुभव करने की इच्छा नहीं होती है। न ही उनकी कोई ऐसी इच्छा होती है कि वह अपने चारों ओर के प्राणी से अपने आपको अधिक श्रेष्ठ ठहराएं। वे अपने सामान्य ज़िन्दगी से, जो मनुष्य को अति उबाऊ प्रतीत हो सकता है, संतुष्ट हैं। (3) मनुष्य के पास साहसी आत्मा होती है जो उसको नई दिशाओं की ओर अग्रसर करती है। वह सदैव इस तथ्य को जानने के लिए तत्पर रहता है कि उस नदी, पर्वत श्रृंखला या समुद्र, के उस पार क्या है; परंतु वह वहीं पर नहीं रुकता है। वह जानना चाहता है कि चंद्रमा, दूसरे ग्रहों और दूरस्थ आकाश गंगा में क्या है। जानवर ऐसी बातों की फ़िक्र नहीं करते; वे दूसरे महाद्वीप, देश या संसार के विषय सोचने की क्षमता नहीं रखते हैं। इसको बिना समझे, मनुष्य, अपनी पूर्ति तथा सिद्धता की खोज में, अपने भीतर परमेश्वर की स्वरूप की साक्षी देते हैं। मनुष्य समय के लिए नहीं बनाया गया है जो सीमित है; बल्कि वह अनंतता के लिए और उसके लिए जो असीमित है, अर्थात परमेश्वर के लिए बनाया गया है। अगस्टीन ने लिखा, "तूने हमें अपने लिए बनाया है और हमारा मन, जब तक तुझमें विश्राम नहीं प्राप्त कर लेता, अशान्त रहता है।"[27]

केवल मनुष्य ही कर्तव्य के चेतना के साथ नैतिक प्राणी है। वह उचित और अनुचित के मध्य और दोषी विवेक के समस्या से संघर्ष करता है (यूहन्ना 8:7-11; रोमियों 2:12-16; 1 कुरि. 8:7-13; 1 तीमु. 1:19; 3:9; 4:2; 1 पतरस 3:16-21)। जब एक बच्चा पैदा होता है तो माँ-बाप को यह नहीं पता होता है कि एक दिन बड़ा होकर क्या करेगा या फिर क्या बनेगा। हरेक बच्चा इस प्रकार के प्रश्न के साथ बड़ा होता है "मैं अपने ज़िन्दगी के साथ क्या करूँगा?" जानवर अपने सहजबोध से कार्य करते हैं; उनकी नियति या भाग्य निर्धारित किया गया है और स्वाभाविक रूप से वे इसकी पूर्ति करते हैं। जब एक बिल्ली पैदा होती है तो हम जानते हैं कि वह बिल्ली ही होगी और स्वाभाविक रूप से जो एक बिल्ली करती है वही वह करेगी। हेमलेट का चिन्तन केवल मनुष्य को ही प्रासंगिक हैः

"होना या न होना? यही प्रश्न है।"[28] केवल मनुष्य को ही चुनाव करने की क्षमता प्राप्त है कि उसका जीवन किस दिशा की ओर जाएगा या किस प्रकार का जीवन वह जीना चाहता है। मनुष्य कुलीन, प्रेमी और धर्मी बनने का चुनाव कर सकता है; या फिर वह अपमानित, स्वार्थी और बुरे बनने का चुनाव कर सकता है। इस प्रकार के चुनाव का विकल्प जानवरों को नहीं है क्योंकि वे नैतिक प्राणी नहीं हैं।

केवल मनुष्य को ही सौन्दर्यपरक प्रकृति प्राप्त है जो उसे कला, चित्रकारी, काव्य और मूर्तिकला बनाने को प्रेरित करता है। केवल मानव ही ऐसे प्राणी हैं जो हफ्तों या महीनों किसी ऐसे विषय पर कार्य करते हैं जो उसके जीने के लिए कोई काम की नहीं होता है। रचना, सौन्दर्यपरक क्रमिक विकास नमूना के प्रतिकूल है जिसे मनुष्य ने लाखों वर्षों के अंतराल में कला कौशल का विकास किया है जो उसके जीने के लिए सहायता करता है और उन चीज़ों को छोड़ दिया है जो उसके जीने में सहायक न हो। यह बात मनुष्य के साथ नहीं हुआ है; उसे छोड़ने के बजाय, उसकी सौन्दर्यपरक गुण समय के साथ-साथ बढ़ता गया। कोई भी जानवर सौन्दर्यपरक मामला के विषय चिन्ता नहीं करता है क्योंकि इन गुणों का जानवरों के जीने के संबंध से कोई लेना देना नहीं है। एक चिड़िया रंग बिरंगे धागों को इसलिए उठा लेती है क्योंकि वे उसके घोंसला बनाने के लिए सहायक होगा। एक उदबिलाऊ अपने घर को पानी के बहाव से बचाने के लिए मज़बूती से बनाता है। परमेश्वर, जिसने सुंदर संसार को उसके सारे रूप तथा आकृतियों में बनाया, उसने मनुष्य को भी बनाया और उसमें उसने अपने आपको सारी सुन्दरता तथा रूप से आच्छादित रहने की इच्छा रंगों, आकारों, आकृति एंव योजना में संतुलन बनाकर जगाई। इसमें में भी एक खतरा है कि कहीं मनुष्य, परमेश्वर के बजाय, अपनी तृष्णा के तृप्ति के लिए सुंदरता की खोज में न लग जाए। प्रत्यक्ष रूप से जो भी इस जाल में फंस जाए, वह सुख समृद्धि और भरपूरी पाने के बजाय, कुंठा और व्यर्थता का अनुभव करने लगेगा, जिस प्रकार शिक्षक ने वर्षों पहले ऐसा अनुभव किया था (सभो. 1:1, 8; 2:1-11)।

केवल मनुष्य को ही कब्र के आगे भविष्य के ज़िन्दगी के विषय संकल्पना करने की सामर्थ प्राप्त है। केवल मनुष्य ही अपने मुर्दों को दफनाते हैं। कुछ लोककथा ऐसी भी है कि कुछ जानवर जैसे चिंपैन्जी और हाथी अपने मरे हुओं को दफनाते हैं, परन्तु वैज्ञानिक रीति से इसकी पुष्टि नहीं हो पाई है। जबकि जानवर भी मृत्यु का सामना करते हैं और कुछ हद तक वे इस से डरते तथा शोक भी करते हैं लेकिन वे इसके लिए तैयारी नहीं करते हैं। मनुष्य में मृत्यु के प्रति पवित्र विचार भी है। वह इसे बहुमूल्य तो समझता है परंतु अन्त नहीं; वह इससे बचने का प्रयास करता है (2 शमुएल 12:19-23; भजन 23:4-6)। प्राचीन समाज में लोग अपने मुर्दों को कुछ बहुमूल्य सामानों से साथ यह सोचकर गाड़ते थे कि अगले दुनिया वह उनके कुछ काम का होगा। यह इस तथ्य का प्रमाण है कि परमेश्वर ने उनके हृदय में अनन्तता का विचार डाला (सभो. 3:11)।

परमेश्वर ने मनुष्य को विशिष्ट बनाया। इस विशिष्टता की आशीष सृजनहार की सेवा तथा उसकी स्तुति करने की ज़िम्मेदारी से जुड़ा हुआ है।

समाप्ति नोट्स

[1]अनुवादों में से बहुत कम, आयत 1 को एक आश्रित वाक्यांश मानते हैं (NAB; NEB; NJPSV; NRSV; TEV)। अधिक जानकारी के लिए, देखें विक्टर पी. हैमिल्टन, *द बुक आफ जेनिसिस: अध्याय 1-17*, द न्यू इंटेरनेशनल कमेंटरी आन द ओल्ड टेस्टामेंट (ग्रांड रापिड्स, मिश्.: डब्लु एम. बी. अद्स्मैंनस पब्लिशिंग को., 1990), 103-8. [2]टेरेंस ई. फ्रेथेम, "द बुक आफ जेनिसिस," में *द न्यू इंटरप्रटरस बाइबल*, वोल. 1, एडी. लिएंडर ई. केक (नैशविले: अबिंगदोन प्रेस, 1994), 342. [3]डब्लयु. एच. स्किमिद्थ, "ברא," में *थियोलोजिकल लेक्सीकन आफ द ओल्ड टेस्टामेंट,* ट्रांस. मार्क ई. बिडल, एडी. एर्नस्त जेनी और कलौस वेस्टरमैन (पीएबोडी, मास.: हेनड्रिकसन पबलिसरस, 1997), 1:255। [4]*द क्रिएसन एपिक* 4.1-146. [5]आर. लेर्ड हैरिस, "תְּהוֹם," में *थियोलोजिकल वर्कबुक आफ द ओल्ड टेस्टामेंट,* एडी. आर. लेर्ड हैरिस, गिलिएसन एल. आरचर, जू., और ब्रूस के. वालटके (चिकागो: मूडी प्रेस, 1980) (इसके बाद *TWOT* से लिया गया है), 2:966. [6]फ्रानसिस बराऊन, एस. आर. ड्राईवर, और चार्ल्स ए. ब्रिग्स, *ए हिब्रू एण्ड इंग्लिस लेक्सिकन आफ द ओल्ड टेस्टामेंट* (आक्सफोर्ड: क्लारेनडोन प्रेस, 1962), 956. [7]जे. बार्टन पायने, "רָקִיעַ," *TWOT* में, 2:862. [8]*द क्रिएसन एपिक* 4.137-140। [9]एच. एल. गिन्सबर्ग, ट्रान्स., "बाल और आनाथ के विषय में कविता," *एनसियन्ट नियर ईस्टर्न टेक्सटस रिलेटिंग टो द ओल्ड टेस्टामेंट,* 3डी एड., एड. जेम्स बी. प्रिचारड (प्रिंसेटोन, एन.जे.: प्रिंसेटोन यूनिवर्सिटी प्रेस, 1969), 129-42. [10]बेथ-शेमेश का अर्थ "सूर्य-मन्दिर" (बराऊन, ड्राईवर, और, ब्रिग्स, 112)। यरीहो नाम भी इसी मूल शब्द "चंद्रमा" से आता है (हेमिलटन, 127-28, एन. 4)।

[11]बराऊन, ड्राईवर, और ब्रिग्स, 1056. [12]इबिद., 1072. [13]जौन टी. विलीस, *उत्पत्ति*, द लिविंग वर्ड कमेंट्री (औस्टिन, टेक्स.: स्वीट पब्लिशिंग को., 1979), 87. [14]एच. सी. लियुपोल्ड, *एक्सपोसिसन आफ जेनिसिस*, वोल. 1 (एन.पी.: वार्टबर्ग प्रेस, 1942; रीप्रिंट, ग्रांड रेपिड्स, मिक.: बेकर बुक हाउस, 1953), 86-87. [15]उदाहरण के लिए, देखें मत्ती 3:16, 17; 28:19; यूहन्ना 1:1-3; 10:30-33; 20:28; प्रेरितों 5:3, 4; रोमियों 8:9-17, 26-29; 2 कुरि. 13:14; इफि. 3:16-19; फिलि. 2:5-11; कुलु. 1:15-17; इब्रा. 1:1-3; यहूदा 20, 21; प्रका. 5:8-14. [16]अय्यूब 1:6 और 2:1 में "परमेश्वर के पुत्र" स्वर्गदूत हैं जो उसके सामने उपस्थित रहते हैं और उनमें से कुछ शैतान हैं। [17]जोन ई. हार्टली, "עֵלֶם," *TWOT* में, 2:767. [18]जौन एन.ओसवाल्ट, "נָבַשׁ," *TWOT* में, 1:430. [19]हेमिल्टन, 139-40. [20]विलियम वहाइट, "רָוָה," *TWOT* में, 2:833.

[21]*द क्रिएसन एपिक* 6.8, 36. [22]*द एपिक आफ गिलगामेश* 11.161. [23]डेरेक किडनर, *जेनेसिस: एन इंट्रोडकसन एंड कमेंट्री*, द टिंडेल ओल्ड टेस्टामेंट कमेंट्रीस (डाउनरस ग्रोव, Ill.: इंटर-वार्सिटी प्रेस, 1967), 52. [24]*द क्रिएसन एपिक* 6.29-33. [25]एल. डी. विरगिलिओ, *डी.एन.ए.व.स. इवोलुसनः द लिट्रिल कोड दैट कनफ़रमस द एंड आफ़ इवोलुसन* (ब्लूमिंगटोन, इंड.: आथर हॉउस, 2009), 107. [26]ली स्ट्रोबेल, *द केस फोर अ क्रिएटर* (ग्रांड रैपिडस, मिच.: जोनडरवन, 2004), 226. [27]अगस्टिन *कन्फैसन* 1.1.1. [28]विलियम शेक्सपियर *हैमलेट* 3.1.55.